राजपाल एण्ड सन्ज़

नई सड़क : : दिल्ली

शिवाजी

[गवेषणापूर्ण ऐतिहासिक जीवनचरित्र]

लेखक
भीमसेन विद्यालंकार

राजपाल एण्ड सन्ज़
नई सड़क : : दिल्ली

मूल्य

दो रुपया

विजय प्रेस, दिल्ली

विषय-सूची

समर्पण

★

यह कृति पति और पिता से उपेक्षित

मातृशक्ति

और उसकी दिव्य लोरियों में पलने वाली, स्वतंत्र मार्ग ढूंढ़ने वाली, दिन रात तपस्या और बलिदान की घाटियों में विचरने वाली, जीवन-संघर्ष के प्रवेशद्वार पर खड़ी, २०, २५ वर्ष की आयु की तरुण उमंगों में लहराती

तरुणशक्ति

को समर्पित

है—

इस रचना के निर्माण में नागरी प्रचारिणी पत्रिका, श्री यदुनाथ सरकार कृत शिवाजी, वीर मराठे, शिवदिग्विजय, शिवाबावनी आदि ग्रन्थों से सहायता मिली है। उन सब का हार्दिक धन्यवाद करता हूँ।

—लेखक

श्रद्धानन्द बलिदान दिवस
२३ दिसम्बर १९४३

१

जीजाबाई की जय

मातृमान् पुरुषो वेद

पंचमी का उत्सव है। बीजापुर दरबार के सरदार पंचमी का पर्व मनाने के लिये आपस में एक दूसरे के घरों पर एकत्र होने लगे। मालोजी भोंसले अपने पुत्र शहाजी के साथ जाधवराव के घर पर उपस्थित हुए। जाधवराव अपनी कन्या जीजाबाई के साथ रंगपंचमी के त्यौहार में सम्मिलित हुए। चारों ओर आमोद-प्रमोद का वातावरण था। छोटे-बड़े रंग-गुलाल उड़ा कर अपनी थकान दूर कर रहे थे। युवकगण स्फूर्तिमयी क्रीड़ाओं में मग्न थे। वृद्ध सज्जन पास बैठी तरुण-मंडली को, आपबीती जगबीती घटनाएं सुना रहे थे। बालक बालकों के साथ खेलकूद में मग्न थे। बाल-लीलाओं को देख कर वृद्ध, युवा सभी प्रसन्न हो रहे थे। इतने में शहाजी और जीजाबाई भी स्वभावसुलभ चंचलता तथा आकर्षण से आपस में खेलने लगे। उनको खेलते-कूदते देख कर जाधवजी के मुंह से सहसा यह उद्गार निकला "क्या सुन्दर युगल जोड़ी सोहती है!" इस उद्गार को सुनते ही मालोजी ने मंडली में खड़े होकर कहा कि आज से जाधोजी हमारे समधी हुए। खेलकूद में दो वंशों का गठबंधन हो गया। जाधोजी इस बात को सुन कर हैरान हो गये। परन्तु अब इस हृदयोद्गार—स्वाभाविक भाव-प्रकाशन—को कैसे लौटाएं? जाधोजी अपने आप को ऊँचे कुल का समझते थे, मालोजी को 'हीन वंश

का। अब उन्हें इस प्रस्तावित सम्बन्ध के विषय में संकोच होने लगा। इधर मालोजी भोंसले ने इस सम्बन्ध को क्रियात्मक रूप देने पर आग्रह करना शुरू किया। धीरे धीरे यह बात बीजापुर दरबार तक पहुँची। बीजापुर दरबार के दरबारियों ने वाग्दान-वचन को निभाने की कोशिश की। दरबार ने मालोजी की स्थिति को उन्नत तथा जाधोजी के बराबर करने के लिये उन्हें जागीरें तथा सरकारी ओहदे भी दिये। दरबार ऐश्वर्य दे सकता था परन्तु जाधोजी के जन्म-कुलाभिमान की अहंकारमयी ज्वाला को शान्त करने के लिये उस के पास कोई साधन न था। महाराष्ट्र के घर घर में इस की चर्चा होने लगी। लोकमत ने जाधोजी को वचन-पालन के लिये बाधित किया। शुभ मुहूर्त (१६०४ ई०) में शहाजी और जीजाबाई का विवाह सम्बन्ध हो गया। लोकाचार पूरे किये गये। परन्तु जाधोजी के जन्म-कुलाभिमान को इससे जो ठेस लगी, उस से वह दिल ही दिल में मालोजी से खलने लगे। पुत्री का प्रेम भी उन के हृदय को शान्त न कर सका। वह यथाशक्ति मालोजी भोंसले और शहाजी को नीचा दिखाने का अवसर ढूँढते। जीजाबाई इस स्थिति को देख कर हैरान थी। कुलाभिमानी जाधवजी ने जन्माभिमान की ऐंठ में अपनी पुत्री के—अपने हृदय की सार-प्रतिमा के--कष्ट और पीड़ा की भी परवाह नहीं की। शहाजी जाधवजी के संधिचक्रों से परेशान हो इधर उधर भटकने लगे। उनके साथ गर्भवती जीजाबाई भी थी। शहाजी जीजाबाई को अपनी आपत्तियों का मूल कारण समझ कर उसके प्रति उदासीन रहने लगा। पति और पिता के तिरस्कारपूर्ण व्यवहार से खिन्न जीजाबाई के हृदय को ढाढ़स बँधाने वाला कोई न था। पति-पत्नी के स्नेह-सम्बन्ध को दृढ़ करने वाली सन्तान, शम्भुजी के नामसे

१६२३ ई० में पैदा हुई। यह अपत्य सम्बन्ध भी शहाजी को जीजाबाई का अनुरागी न बना सका। प्रचलित दन्तकथाओं के अनुसार जीजाबाई का बड़ा लड़का शम्भुजी कनकगिरि में मारा गया। इस के बाद शहाजी के हृदय में लखूजी जाधव और उसके परिवार के लिये घृणा का भाव गहरा हो गया। उसने समझा कि जाधव की कन्या का पुत्र उस के किसी काम न आयगा। उन्होंने जीजाबाई और शम्भुजी का परित्याग कर दिया। जाधोजी यथाशक्ति शहाजी को चैन न लेने देता था। शहाजी को नीचा दिखाने के लिये जीजाबाई के पिता मुगल दरबार से जा मिले। उधर मुगलों के आक्रमण से अहमदनगर की निज़ामशाही को बचाने के लिये शहाजी यत्न करने लगा। शहाजी ने जीजाबाई को उत्तर की ओर कोंकण प्रदेश में दादाजी कोंडदेव की रक्षा में, शिवनेरी किले में भेज स्वयं सांसारिक महत्वकांक्षा को पूरा करने के लिये दक्षिण-भारत की मुसलमानी बादशाहियों में संधिचक्र तथा युद्धचक्रों का संचालन कर जीवनयात्रा व्यतीत करने लगे। इन्हीं दिनों इस भागदौड़ में जीजाबाई को पतिदेव के राजनैतिक सन्धिचक्रों के जोड़तोड़ के कारण स्थान-स्थान पर भटकना पड़ा। वह अपने आराम उपभोग के लिये पतिदेव को छोड़ कर पितृगृह में जा सकती थी, परन्तु आर्यसंस्कृति तथा आर्यजाति की पवित्र मर्यादा के अनुसार वह पतिगृह को न छोड़ना चाहती थी।

इन अमंगल और अनर्थ की परम्पराओं से अपनी सन्तान की रक्षा के लिये वह अपने इष्टदेव शिव का चिन्तन-स्मरण करने लगी, और पतिदेव की इच्छानुसार शिवनेरी किले में सन्तान-प्राप्ति की प्रतीक्षा में दिन बिताने लगी। १६२७ ई० में १० अप्रैल को बालक ने जन्म लिया। इष्टदेव 'शिव' की स्मृति में इसका नाम भी शिवाजी रखा गया।

पौराणिक दन्तकथाओं में आता है कि दक्ष प्रजापति और शिव के पारस्परिक संघर्ष में, पार्वती ने अपने पूजनीय पिता दक्ष प्रजापति का साथ देने के स्थान पर पतिदेव के साथ तपस्या का जीवन व्यतीत किया और पातिव्रत धर्म के प्रभाव से राक्षस-संहारी पुत्र को जन्म दिया। जीजाबाई दिनरात इन दिनों पतिदेव के युद्धचक्रों तथा नीतिचक्रों की चिन्ता में लगी रहती थी। नैपोलियन की वीर माता ने गर्भ दशा में नैपोलियन को वीर-प्रकृति युद्ध-विजेता बनाया था। अभिमन्यु की माता सुभद्रा ने अभिमन्यु को गर्भ-दशा में, पतिदेव से व्यूहचक्र की कहानियां सुनते सुनते, व्यूहचक्र को भेद करने का रहस्य सिखाया था। जीजाबाई ने भी अपने पुत्र शिवाजी को गर्भ-दशा से ही क्षात्रधर्म का पाठ पढ़ाया। पति और पिता के संघर्ष से खिन्न और उद्विग्न जीजाबाई को पुत्र का आश्रय मिला। अपनी शक्ति, अपना ध्यान पुत्र पर केन्द्रित किया। पतिदेव तथा पितृदेव दोनों की स्मृति में शिव-अर्चना करने लगी। साक्षात् शिव का अवतार समझ कर पुत्र को अपने संकटों का दूर करने वाला स्वीकार किया। अपने संकटों के मूल कारणों को दूर करने के लिये संस्कार, वासना तथा भावनाओं द्वारा उसे शिक्षित तथा संस्कृत करने का संकल्प किया। शहाजी ने इन्हीं दिनों दीपाबाई नाम की देवी से दूसरा विवाह किया। जीजाबाई के प्रति उपेक्षा तथा उदासीनता की भावना पराकाष्ठा को पहुँच गई। इस विवाह द्वारा उसने जाधवराव की पुत्री की अन्तरात्मा को क्लेशित कर जाधवराव के प्रति द्वेषभाव को मूर्तरूप दिया।

पुरुष जाति के स्वार्थमय, सामाजिक ऊँच नीच के इस कुपरिणाम को जीजाबाई ने देखा और अपना सर्वस्व लुटाकर इसे दूर करने का संकल्प किया। शिवाजी भी पिता द्वारा,

पुरुषजाति द्वारा, किये गये मातृशक्ति के अपमान को देख कर सिहर उठा। उसके तरुण हृदय में उस समय की पुरुष जाति तथा सामाजिक ऊँच-नीच के प्रति, विद्रोह का भाव प्रबलता के साथ जाग उठा। माता और पुत्र एक ही व्रत में दीक्षित होकर संकल्प-पूर्ति के लिये अपने आप को तैयार करने लगे। जीजाबाई ने रामायण और महाभारत की कथाएँ सुना कर उसे युद्धचक्रों तथा संधिचक्रों की शिक्षा देनी आरम्भ की। शिवाजी के हृदय में, राम की भांति वानर जाति के वीर पुरुषों के उत्तराधिकारी, पर्वतों तथा कोंकण की घाटियों में विचरने वाले मावलियों को अपनाने की प्रेरणा हुई। शिवाजी इनमें खेलने लगा। इन्हें बाल-सखा बनाया। यह सब वीर भी जीजाबाई को माता की तरह पूजने लगे। जीजाबाई ने महाभारत की कथाएँ सुना कर श्री कृष्ण की भांति आवश्यकतानुसार संधि-चक्रों तथा छलयुद्धों में विजयी होने के लिये शिवाजी को शिक्षित किया। कोई ब्राह्मण शिवाजी को छोटी जाति का होने से मंत्रदीक्षित करने को तैयार न था, परन्तु माता की लोरियों की वीर-रसोत्तेजक शिक्षा ने इस पुत्र की मंत्र-शिक्षण की कमी को पूरा किया। जीजाबाई एकान्त में, जन समुदाय में, सब जगह होनहार वीर शिवाजी को लिये विचरने लगी। शिवाजी के बालसखा भक्त उनके गुणों से आकृष्ट हुए चारों ओर इकट्ठे होने लगे।

× × × ×

इतने में समाचार मिला कि शहाजी को बीजापुर दरबार ने उनकी वीरता और योग्यता पर प्रसन्न होकर पूना और सूपा की जागीर दी है। शहाजी ने अपना कार्यक्षेत्र कर्नाटक को बनाया। अपनी नवविवाहिता पत्नी के साथ उधर ही रहने का विचार किया। जीजाबाई और उसके

पुत्र शिवाजी को पूना व सूपा की जागीर निर्वाह के लिये देने का संकल्प किया। दादा जी कोंडदेव को इसका प्रबन्ध करने के लिये नियत किया। पूना-सूपा की जागीर शिवाजी के नाम कराने के लिये शिवाजी को बीजापुर दरबार में बुला भेजा। जीजाबाई भी पतिदेव के दर्शनों के लिये पुत्र के साथ बीजापुर पहुँची। चिर-प्रतीक्षा के बाद आर्य देवी पुत्र सहित पतिदेव के चरणों में उपस्थित हुई। श्रद्धा और भक्ति के भाव प्रकट करने की उत्कंठा थी। परन्तु शहाजी ने जीजाबाई को कहा कि तुम यहाँ क्यों आईं ? माता तथा पुत्र पिता के इस भाव को देख कर चकित हो गए। माता के लाड़ले, शिवाजी के हृदय में माता के इस अपमान को देख कर ग्लानि और विद्रोह के भाव पैदा हुए। शहाजी बीजापुर दरबार की कृपा की चाह में, अपने कर्तव्य को भूल गया। जीजाबाई ने पुत्र को शान्त किया। परन्तु माता के अपमान को वीर पुत्र कैसे भूलता ? शहाजी ने जीजाबाई और शिवाजी को कुछ दिनों के लिये बीजापुर में रहने के लिये कहा। मौका देख कर पूना-सूपा की जागीर शिवाजी के नाम कराने के लिये शिवाजी को बीजापुर दरबार में उपस्थित किया।

शिवाजी का मन माता के अपमान से अशान्त था। उन्होंने दरबार में उपस्थित होकर बादशाह को 'मुजरा' आदि न किया। शहाजी ने 'बालक नाबालिग़ है' कह कर बादशाह को शान्त किया। जीजाबाई की छत्रछाया तथा लोरियों में पलने वाले वीर शिवाजी 'नाबालिग़' नहीं थे। उन्होंने समझ लिया कि इन जागीरों तथा बादशाही कृपाओं की चाह में ही उसके पिता दरबदर भटक कर उसकी माता की उपेक्षा कर रहे हैं। दरबार की रौनक समाप्त हुई। जीजाबाई विद्रोही पुत्र के साथ

पूना-सूपा को वापिस आई। रास्ते में शिवाजी माता के साथ बीजापुर दरबार की तथा उस समय की स्थिति को बदलने के लिये भांति-भांति के मनोरथ बनाते हुए वापिस आए। जीजाबाई ने शिवाजी के साथ बीजापुर जाकर उन्हें स्थिति की भयंकरता का साक्षात् अनुभव कराया। इसने उनके हृदय में प्रज्वलित विद्रोह की आग को और भी प्रदीप्त किया। इस तरह भविष्य में स्वदेशी तथा विदेशी सब अत्याचारियों को भस्मसात् कर महाराष्ट्र में जनता का राज्य स्थापित करने की भूमिका बांधी गई।

× × × ×

शिवाजी की स्वच्छन्द-क्रियाओं, स्वेच्छाचारिता तथा उथल-पुथल से बीजापुर दरबार तंग हो गया। दरबार ने अफ़ज़लखां को उनका दमन करने के लिये भेजा। वह भारी सेना के साथ शिवाजी का सिर कुचल कर छल-नीति का प्रयोग करने के लिये उद्यत हुआ। जीजाबाई को इस आने वाले संकट का पता लगा। शिवाजी जीजाबाई के चरणों में उपस्थित हुए। जीजाबाई ने "व्रजन्ति ते मूढ़धियः पराभवं, भवन्ति मायाविषु ये न मायाविनः"[1] का उपदेश देकर शिवाजी को छलनीति का आश्रय लेने के लिये प्रेरित किया। अपने पुत्र को अपने हाथों बाघनखा, कवच तथा लोहे की टोपी पहना कर विदा किया! क्या आज कोई वीर माता अपने पुत्र को इस प्रकार विदा करने को तैयार है? माता का आशीर्वाद लेकर शिवाजी मृत्यु को निमन्त्रण देने उपस्थित हुए। माता के आशीर्वाद ने जादू का सा असर किया! माता के आशीर्वाद

---

[1] जो लोग संसार यात्रा में धोखेबाज़ों के कपट का छल कपट से मुकाबला नहीं करते, वे पराजित होते हैं।

रूपी अभेद्य कवच पर शत्रु का वार बेकार रहा।

× × × ×

शिवाजी महाराजा मिर्ज़ा जयसिंह की प्रेरणा तथा आश्वासन पर औरंगजेब के दरबार में उपस्थित होने के लिये आगरा जाने के लिये तैयार हो रहे हैं। तरुण मंडली तथा शिवाजी के बालसखा और मंत्रि-मंडल चिन्तित हैं कि पता नहीं औरंगजेब क्या करे? पीछे महाराष्ट्र के शासन-चक्र का संचालन कैसे हो? शिवाजी के व्यक्तित्व के स्थान पर किसका व्यक्तित्व सारे मराठा-मंडल को एक सूत्र में संगठित करेगा? वीर पुत्र ने माता के सामने यह समस्या उपस्थित की। जीजाबाई ने पुत्र का प्रतिनिधि होकर शासन-सूत्र की बागडोर संभाली और शिवाजी को अमर आशीर्वाद के साथ मृत्यु के मुँह में, औरंगजेब की छल-शाला में, जाने के लिये उत्साहित तथा सावधान किया। केवल पुत्र को ही नहीं, अपने पुत्र के पुत्र को भी साथ भेजा! क्या आज कोई वीर देवी अपने प्राणसार को—अपने हृदय के सार पुत्र को—इस प्रकार राष्ट्रीय कार्य के लिये संकटपूर्ण मार्ग का राही बनाने को तैयार है? जीजाबाई ने अपने हृदय के टुकड़ों को महाराष्ट्रीय जनता की स्वाधीनता की जलती भट्टी में भेंट कर, शिवाजी के बालसखाओं तथा साथियों को भारी से भारी बलि-दान देने के लिये उतावला कर दिया।

× × × ×

मुग़ल दरबार के समाचार महाराष्ट्र में पहुँचे। शिवाजी पुत्र सहित औरंगजेब का कैदी बन गया। जीजाबाई विचलित न हुई। उनके व्यक्तित्व ने महाराष्ट्र को विशीर्ण न होने दिया!

राजमाता की आज्ञाओं को जनता ने सिर माथे स्वीकार किया।

राजगढ़ का क़िला है। राजमाता क़िले में बैठी है। क़िले के पहरे-दारों ने राजमाता की सेवा में निवेदन किया कि कुछेक विचित्र वैरागी क़िले के दरवाजे पर खड़े हैं। आपके दर्शनों के लिये अन्दर आना चाहते हैं। जीजाबाई ने अन्दर आने की आज्ञा दे दी। राजमाता के सामने उपस्थित होते ही नीरोजी पन्त ने वैरागियों की प्रथानुसार जीजाबाई को आशीर्वाद दिया। शिवाजी (वैरागी वेश में) जीजाबाई की ओर बढ़े और अपने आप को उनके चरणों में समर्पित किया। जीजाबाई उन्हें पहचान न सकी और वैरागी के इस व्यवहार से हैरान होगई कि एक वैरागी इस प्रकार मर्यादा के विपरीत आशीर्वाद देने के स्थान पर, अपने आप को भक्तों के चरणों में समर्पित कर रहा है। माता को चकित स्तम्भित देखकर शिवाजी ने अपना सिर जीजाबाई की गोदी में रख दिया और वैरागियों वाली टोपी अपने सिर से उतार दी। शिवा जी के सिर के चिह्न को देखकर जीजाबाई ने उसे तत्काल पहचान लिया और उसका आलिंगन किया। जीजाबाई पुत्र की चतुराई तथा कुशलता को देख कर आनन्द-पुलकित हो गई। राजमाता ने शिवाजी के सकुशल लौटने पर अपने आप को धन्य-धन्य समझा।

× × × ×

कर्नाटक में बाजाजी निम्बालकर नाम का मराठा सरदार रहता था। बीजापुर के बादशाह ने उसे कहा कि या तो तुम मुसलमान बनो नहीं तो तुम्हारी जागीर और सम्पत्ति छीन ली जायगी। पारिवारिक परिस्थितियों से लाचार होकर निम्बालकर ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया। कुछ समय बाद यह सरदार शिवाजी के दरबार में पहुंचा।

जीजाबाई को इस अनुभवी सरदार के पहुँचने का समाचार मिला। उन्होंने इस बलशाली सरदार को मराठा-मण्डल में सम्मिलित करने का विचार प्रकट किया। बिछुड़ी आर्य सन्तान को अपनाने का संकल्प किया। सरदारों से परामर्श किया।

राजमाता के संकल्प तथा इच्छा के सामने सब ने सिर झुकाया। शुद्धि की गई। उसे फिर से आर्य जाति का अंग बनाया गया। जीजाबाई को इससे सन्तोष न हुआ। विवाह सम्बन्ध के बिना इस प्रकार के संस्कार क्षणिक प्रभाव पैदा करते हैं। जीजाबाई ने अपनी पोती, शिवा जी की पुत्री व शम्भा जी की बहिन सुखुबाई का विवाह बाजाजी निम्बालकर के पुत्र महारांजी के साथ सन् १६५७ में कर दिया। आज आर्य जाति की देवियां अपनी संकीर्णता तथा रूढ़िप्रियता के कारण आर्य जाति में सम्मिलित होने वाले लाखों आर्य-सन्तानों को कुलाभिमान तथा जन्माभिमान के कारण तिरस्कृत कर रही हैं। जीजाबाई ने इस कार्य द्वारा महाराष्ट्र की जनता के सामने यथार्थ में अपने आप को राजमाता के रूप में उपस्थित किया। शिवाजी के बाल सखा, छोटे-बड़े जन्ममूलक ऊंचनीच आदि के भेदभाव को छोड़ कर, जीजाबाई को राजमाता एवं राष्ट्रमाता के रूप में पूजने लगे।

× × × ×

शिवाजी के राज्याभिषेक की तैयारियां हो रही हैं। विविध देशों के राजदूत शिवाजी की भेंट करना चाहते हैं। परन्तु शिवाजी राज्याभिषेक समारोह में सम्मिलित होने से पूर्व स्वामी गुरु रामदास और जीजाबाई की सेवा में उपस्थित होकर आशीर्वाद प्राप्त कर रहे हैं। आज का दृश्य स्वर्गीय है। जागीरदार की कन्या जीजाबाई को सारा

जीवन, युवावस्था की उमंग भरी रातें, मुसीबतों में बितानी पड़ीं थीं परन्तु आज उसकी दुःख की वह रातें समाप्त होती हैं। पिता और पति दोनों से उपेक्षित जीजाबाई के चरणों में, आज महाराष्ट्र के छत्रपति सिर झुका रहे हैं। जिस कामना की साधना में सारा जीवन व्यतीत किया, आज वह सफल हुई। शहाजी की उपेक्षिता धर्मपत्नी, अस्सी साल की आयु में, आज पति व पिता की उदासीनता को भूलकर, वीर पुत्र की भक्ति और श्रद्धामयी सेवा से पुलकित हो अपने आप में समा नहीं रही। आनन्दाश्रु उसकी चिन्ता तथा विपत्तियों से जर्जर शरीर को पुलकित और स्फूर्तिमय बना रहे हैं। आज उसके आनन्द का पारावार नहीं। अपने पुत्र को अपनी जन्मभूमि में मुकुट धारण करते हुए देख कर वह आनन्द की अनन्त लहरियों में तरंगित हो रही है। दयालु परमात्मा ने शायद उसे यह स्वर्गीय दृश्य देखने के लिये दीर्घायु प्रदान की है। राज्याभिषेक के १२ दिन बाद १८ जून को जीजाबाई ने देह-लीला संवरण की। राजमाता कुन्ती की भाँति जीजाबाई ने अपने पुत्र को विजयी और राजाभिशक्त हुआ देख कर "धर्मे वो धीयतां बुद्धिः मनोवोमहदस्तुच"[1] का उपदेश देते हुए संसार से विदाई ली। जागीरदार की पुत्री, जागीरदार की पत्नी, विद्रोही तरुण की माता आज राष्ट्रमाता की आनशान और शोभा के साथ संसार से कूच कर गई। बोलो, राजमाता जीजाबाई की जय !!!

---

[1] तुम्हारी बुद्धि धर्म का चिन्तन करे और तुम्हारा मन विशाल तथा उदार हो।

२

शिवा जी का बाल्य-काल और शिक्षण

गजेन्द्राश्च नरेन्द्राश्च प्रायः सीदन्ति दुःखिताः ॥[1]

१६३६ मार्च तक शहाजी का परिवार शिवनेरी क़िले में रहा। १६३६ ई० अक्तूबर में शाहजी ने बीजापुर दरबार में नौकरी की। दरबार ने उन्हें चाकण से लेकर इन्दपुर और शिरबाल तक का प्रदेश जागीर के रूप में दिया। शहाजी ने दादाजी कोंडदेव को जागीर का प्रबन्धक नियत किया और उनसे कहा कि "मेरी धर्मपत्नी जीजाबाई शिवनेरी के किले में रहती है। उसने शिवाजी नाम के पुत्र को जन्म दिया है। उसे और उसके पुत्र शिवाजी को ले आओ और अपने निरीक्षण में उन्हें पूना में रखो। उन्हें आवश्यक खर्चों के लिये धन देते रहो।" माता तथा पुत्र शहाजी से पृथक् रहने लगे। शिवाजी अकेला, पिता के वात्सल्य प्रेम से वंचित हो, पलने लगा। जीजाबाई उसके लिये सब कुछ थी। वह उसे साक्षात् देवी की तरह पूजता था। शिवाजी चिरकाल तक अपने पिता के लिये अजनबी बना रहा। शिवाजी ने अपने जीवन की रूपरेखा का निर्माण स्वयं किया। स्वतन्त्र-स्वच्छन्द निर्बाध जीवन व्यतीत करने के कारण उसके स्वभाव में दूसरों के आगे हाथ पसारने की प्रकृति पैदा नहीं हुई। होनहार वीर

---

[1] शेर और स्वाभिमानी राजा, स्वाभिमान रक्षा के लिये प्रायः कष्टों और मुसीबतों का जीवन व्यतीत करते हैं।

पुरुषों की भांति उनमें स्वयं अपने लिये जीवन की दुर्गम घाटियों में अपना रास्ता बनाने की प्रवृत्ति पैदा हुई। इस प्रवृत्ति ने ही उन्हें विपरीत परिस्थितियों में, निर्भय और निःशंक होकर आगे बढ़ने की ओर प्रेरित किया। महाराणा रणजीतसिंह और अकबर की भांति बाल्यकाल से ही शिवाजी को स्वतन्त्र बुद्धि से काम लेना पड़ा।

जब दादाजी कोंडदेव ने पूना की जागीर का प्रबन्ध संभाला उस समय यह ज़िला उजाड़ हो चुका था। लगातार छः साल के युद्धों ने भूमि को बर्बाद कर दिया था। उच्छृङ्खल आक्रमणकारी सिपाहियों की लूटमार के बाद चोर डाकुओं ने अराजकता से खूब लाभ उठाया। पूना का प्रदेश निजामशाही के अधिकार से निकल कर बीजापुर की आदिलशाही के अधीन हुआ था। इस शासन-परिवर्तन-काल में कोई स्थिर शासनतन्त्र स्थापित न हो सका था। शहाजी को इस भाग दौड़ में इस प्रदेश का प्रबन्ध करने की फुर्सत न थी। १६३१-३२ ई० में इस प्रदेश में भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा। इस दुर्भिक्ष ने शहाजी, और बीजापुर दरबार की सेनाओं से तहस-नहस इस प्रदेश को और भी उजाड़ कर दिया। १६३४-३६ तक मुगलों के आक्रमणों ने जुन्नार और पूना के उत्तरी मार्ग को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। इन्हीं दिनों अहमदनगर की निजामशाही के छिन्न-भिन्न होते-होते मोरोतान देव नाम के विद्रोही किसान ने पूना के समीपवर्ती प्रदेश में उपद्रव खड़ा कर उसे अपने अधीन कर लिया। इस उजड़े प्रदेश में जंगली पशुओं की प्रबलता हो गई।

दादाजी कोंडदेव ने अपने स्वामी शहाजी के पुत्र शिवाजी के साथ मिलकर इस उजड़ी जागीर तथा प्रदेश को आबाद तथा सुरक्षित करने का यत्न किया। दादाजी कोंडदेव ने हिंसक पशुओं को मारने वाले पहाड़ियों को इनाम देने की घोषणा की। पहाड़ी लोगों को कई प्रकार

के प्रलोभन तथा रियायतें देकर इस प्रदेश में खेतीबाड़ी करने के लिये उत्साहित किया। नए किसानों से भूमि-कर में प्रथम वर्ष में एक रुपया, द्वितीय वर्ष तीन, तीसरे वर्ष छः, चौथे वर्ष नौ, पांचवें वर्ष दस और छठे वर्ष बीस रुपया लगान लेने की घोषणा की। पुराने किसानों को भी इसी प्रकार की अनेक सुविधाएं दीं। दादाजी कोंडदेव की इस नीति से यह प्रदेश कृषि-भूमि बन गया।

इस प्रदेश की रक्षा के लिये स्थानीय सिपाहियों की टुकड़ी सङ्गठित की। इन सिपाहियों को प्रदेश की रक्षा के लिये उचित स्थानों पर तैनात किया। दादाजी कोंडदेव के सुप्रबन्ध से उस देश से चोरों और लुटेरों का नाम मिट मया। शहाजी के नाम से एक बगीचा बनाया। किसी भी व्यक्ति को वहाँ से फलादि तोड़ने की आज्ञा न थी। एक दिन अचानक दादाजी कोंडदेव ने स्वयं उस बाग में एक आम के वृक्ष से फल तोड़ लिया। इस अपराध पर वे स्वयं अपना हाथ काटने लगे, परन्तु दूसरे व्यक्तियों के बीच में पड़ने से वह रुक गये। नियन्त्रण के प्रति सन्मान का भाव दिखाने के लिये उन्होंने जीवन के शेष भाग में अपने गले में लोहे की जंजीर डाली और अपराधी हाथ को मृत्युपर्यन्त लम्बे दस्ताने में बन्द रखा। दादाजी कोंडदेव की संगति से शिवाजी ने प्रबन्ध, शासन और नियन्त्रण करने की शिक्षा प्राप्त की। साथ-ही-साथ घोड़े पर चढ़ना, शस्त्रास्त्र चलाना तथा योद्धाओं के लिये आवश्यक करतब शिवाजी ने इस प्रदेश में पूरी स्वाधीनता के साथ सीखे। दिन-रात पहाड़ी मावलियों के साथ इन घाटियों में विचरने से शिवाजी का स्वभाव और शरीर स्फूर्तिमय अनथक परिश्रम करने का अभ्यासी हो गया।

शिवाजी के अक्षरज्ञान की शिक्षा के विषय कोई स्पष्ट प्रबल प्रमाण नहीं मिलता। तारीख-ए-शिवाजी और चिटनवीस के वर्णनों से यह पता लगता है कि दादाजी कोंडदेव ने शिवाजी को शिक्षित करने के लिये शिक्षक नियत किया और वह बहुत विद्वान् हो गये। परन्तु उपलभ्यमान ऐतिहासिक विवरणों में ऐसा कोई प्रबल प्रमाण नहीं मिलता जिससे शिवाजी के पुस्तकज्ञान अथवा अक्षर-ज्ञान को सिद्ध किया जा सके।

परन्तु इस शिक्षणके न होने से उनका हृदय तथा मन भावहीन और जड़ नहीं रहे। शिवाजी के हृदय तथा मन को रामायण, महाभारत की कथाओं ने आलोकित किया था। उन्हें साधु-सन्त, फ़क़ीरों के सत्सङ्ग का बहुत शौक़ था। रामदास, तुकाराम और मुसलमान फ़क़ीरों की सेवा और सत्सङ्गति से उन्होंने अपने हृदय में आध्यात्मिकता और पवित्र भावों को विशेष रूप से सञ्चित किया था। जब कभी विजय यात्रा से अवसर बचता तो मार्ग में आने वाले मन्दिरों के दर्शन से न चूकते थे। माता जीजाबाई की धार्मिक और वैराग्यप्रधान सात्विक प्रवृत्तियों ने शिवाजी के हृदय को आदर्शवाद का पुजारी बना दिया था। बाल्यकाल की इस शिक्षा ने उसे युवावस्था तथा बड़ी उमर में अपने स्वीकृत पथ से विचलित न होने दिया।

× × ×

सेनापति नैल्सन और सम्राट् नैपोलियन के विषय में प्रसिद्ध है कि उन्होंने अपने जीवनकाल की प्रसिद्ध लड़ाइयां अपने शिक्षणालयों के क्रिकेट के मैदानों में जीती थीं। इसी प्रकार से शिवाजी के विषय में यह कहना यथार्थ है कि उन्होंने बीजापुर और मुगल बादशाहों के साथ

जो भयंकर युद्ध किये, उनकी तैयारी उन्होंने अपने शिक्षाकाल में, शैशव-क्रीड़ा स्थान मावला के प्रदेश में की थी। पूना प्रदेश का पश्चिमी भाग— पश्चिमी घाट के साथ १० मील की लम्बाई और १४ मील की चौड़ाई वाला स्थान—मावला प्रदेश कहलाता था। यह प्रदेश अत्यन्त औघड़, पथरीला, चक्करदार, गहरी घाटियों से घिरा हुआ, छोटे-छोटे समतल भूमि भागों वाला है। इन घाटियों में कई तरह की ऊँची-सीधी पहाड़ियां दिखाई देती हैं। जहाँ वृक्ष हैं, वहाँ साथ ही घनी झाड़ियों वाले दुर्गम जङ्गल भी हैं। कहीं-कहीं घने-घने जङ्गलों के टुकड़े दिखाई देते हैं। इस प्रदेश की उत्तरी घाटियों में रहने वाले पहाड़ी कोली कहलाते हैं। दक्षिणी घाट के निवासी मराठा कहलाते हैं। इस प्रदेश की आबोहवा खुश्क और जीवन-सञ्चारिणी है। पश्चिमी और दक्षिणी भारत के अन्य प्रदेशों की अपेक्षा यहाँ का वातावरण कम गर्म है। यह सारा प्रदेश सामूहिक रूप में १६ मावलों के नाम से कहलाता है। जुन्नार के नीचे १२ मावल थे और पूना के नीचे भी १२ मावल थे। दादाजी कोंडदेव ने इन मावलों को पूर्णतया अपने अधीन कर लिया। जिन्होंने सिर उठाया, उन्हें कुचल दिया गया। शिवाजी भी इन प्रदेशों में विचरते रहे। दिन-रात के इस क्रीड़ास्थल से उन्हें भविष्य के जीवनसाथी, उत्तम सिपाही, बालसखा और सब कुछ न्यौछावर करने वाले अनुयायी मिले। येशाजी कंक तथा बाजी पासलकर शिवाजी के समवयस्क मावले सरदार थे। कोंकण का तानाजी मालसुरे भी इसी प्रकार का शिवाजी का विश्वस्त बालसखा वीर था।

इन साथियों के साथ शिवाजी स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करने

लगे। यथावसर क्षात्रधर्म में शिक्षित होने के लिये किलों पर भयानक आक्रमण करते। मुगल दरबार और दक्खन के विदीर्ण होते हुए दरबारों में उन्हें अपनी शक्तियों के विकास का अवसर दिखाई देता था। वे स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करने के लिये उत्कण्ठित थे। दादाजी कोंडदेव, उनकी इन उच्छृङ्खलताओं से चिन्तित थे। कई बार शाहजी तक इस की सूचना भी पहुँचाई। शाहजी ने चेतावनी के पत्र भी लिखे। दादाजी कोंडदेव ईमानदार तथा प्रभावशाली प्रबन्धक थे। बीजापुर दरबार और शाहजी की सेवा करना वह अपना मुख्य कर्त्तव्य समझते थे। जीवनकाल का बड़ा भाग इसी भावना में बिताया था। वे शिवाजी की मनोवृत्ति को, उनकी उमंगों को समझ न सकते थे। उन्होंने कई बार शिवाजी को बीजापुर का भक्त बनकर साँसारिक ऐश्वर्य का उपभोग करने, और ऊंचे ओहदे प्राप्त करने के लिये प्रेरित किया। परन्तु माता की स्वतन्त्र लोरियों, पहाड़ी प्रदेशों की उत्तुङ्ग चोटियों की स्वाभाविक स्वतन्त्र पवन में, विकसित उमंगें, दरबार के सुनहरी ऐश्वर्यों से तृप्त न हो सकती थीं। वे स्वतन्त्र सिंह की भांति दुर्गम पहाड़ियों में अपना स्वतन्त्र रास्ता बनाना चाहते थे। इन्हीं दिनों १६४७ ई० दादाजी कोंडदेव का देहान्त हो गया। कइओं का कहना है कि शिवाजी की उच्छृङ्खलताओं तथा बीजापुर दरबार की भर्त्सनाओं से तंग आकर दादाजी ने विष खा लिया। इस समय शिवाजी की आयु २० वर्ष की थी। दादाजी की मृत्यु के बाद शिवाजी स्वतन्त्र हो गये। अपनी जागीर का प्रबन्ध तथा शासन की बागडोर स्वयं संभाली। एक जागीरदार के बेटे, दरबारी पिता के पुत्र ने अशिक्षित पहाड़ी

किसानों को बाल-सखा बनाकर, भवानी की तलवार के चमत्कारी आक्रमणों और सतर्क जटिल संधियुद्धों के गहरे दांवपेचों से, साधन-सम्पन्न शासनतन्त्रों को शिथिल और जीर्णशीर्ण कर दिया। इसका रोमांचकारी वर्णन ही शिवाजी की जीवनी का विद्युत्संचारी कथानक है। वर्तमान भारत को स्वतन्त्र भारत बनाने के लिए उत्कण्ठित तरुण हृदय किसानों, आदर्शवादी जमींदारों, राष्ट्रभक्त मजदूरों, स्वाभिमानी धनीमानी भारतीयों को, स्वतंत्र एवं स्वाभिमान-पूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिये, शिवाजी की भांति दरबारों द्वारा सम्मानित होने के स्थान पर, भूखी-असन्तुष्ट जनता द्वारा सम्मानित होने का संकल्प धारण करना चाहिये। तभी भारतमाता अपने पुत्रों को स्वतन्त्रता, समानता भ्रातृभावना की पवित्र निर्मल शीतल जलधाराओं से अभिषिक्त देख सकेगी। यथार्थ में इस स्वतन्त्र युद्ध की तैयारी के लिये—भारत की पर्वतमालाओं की घाटियां, घने बीहड़ जगलों की पगडंडियां, शहरों की गलियां, गांवों की झोपड़ियां और समतल मैदानों की निर्जन मरुस्थलियां ही पूर्वपीठिकाभूमि और शिक्षणस्थान हैं। इनकी पैदल परिक्रमा करने वाले ही, स्वातन्त्र्य-युद्ध में दीक्षित हो सकते हैं।

☆

३

स्वातन्त्र्य-युद्ध का शंखनाद

सेनापति की नियुक्ति

शिवाजी अपने पिता की पश्चिमी जागीर पर काम करने वाले हरेक कार्यकर्ता को जानते थे। दादाजी कोंडदेव के जीवनकाल में ही शिवाजी जागीर पर काम करने वाले नौकरों को अपने नाम से सीधी आज्ञाएं देने लगे थे। उनके मुख्य कार्यकर्ता निम्नलिखित थे। (१) श्यामराज नीलकण्ठ रांचेकर पेशवा (Chancellor) थे। (२) बालकृष्ण दीक्षित मजूमयेदार हिसाब लिखने वाले (Accountant General) थे। (३) सोनाजी पन्त दबीर मन्त्री (Secretary) थे। (४) रघुनाथ बल्लाल कोर्डे सबनीस कोषाध्यक्ष (Pay Master) थे। शाहजी ने जागीर का प्रबन्ध करने के लिये यह चार व्यक्ति १६३६ ई० में कर्नाटक से इधर भेजे थे। दादाजी कोंडदेव इनसे जागीर का काम लेते रहे। शिवाजी ने प्रबन्ध का काम हाथ में लेते ही तुकोजी घोरमराठे को अपना 'सर-ए-नौबत' सेनापति (Commander-in-Chief) और नारायण पन्त को खज़ानची (Divisional Paymaster) नियत किया। सेनापति की नियुक्ति द्वारा, शिवाजी ने स्वातन्त्र-युद्ध का शंखनाद किया। रणचण्डी भवानी की पूजाके लिये, स्वतन्त्रता के दीवाने शस्त्रधारी सिपाहियों की टोली को सजाया। इन्हीं दिनों १६४६ ई० में शिवाजी को समाचार मिला कि बीजापुर का बादशाह मुहम्मद आदिलशाह बीमार हो गया है। वह दस साल तक

बीमार रहा। इस बीमारी के कारण बादशाह दरबार तथा राज के कामकाज स्वयं न देख सकता था। प्रबन्ध का काम बेगम बड़ी साहिबा करती थीं। राज्य के दूरस्थ प्रदेशों में कर्नाटक आदि प्रान्तों में, सरदार लोग स्वेच्छापूर्वक यथावसर प्रदेशों को बीजापुर में शामिल कर रहे थे।

शिवाजी ने बीजापुर दरबार की निर्बलता से लाभ उठाने का संकल्प किया। १६४६ ई० में तोरण का किला जीतने के लिये बाजी-पासलकर, येशाजी कङ्क और तानाजी मालसुरे को मावलों की पैदल टुकड़ी के साथ भेजा। बीजापुर का सरदार इनके सामने टिक न सका। तोरण का किला शिवाजी के अधीन हो गया। यहां के सरकारी खज़ाने से लगभग दो लाख की सम्पत्ति मिली। इस किले से पांच मील पूर्व की ओर पहड़ियों की इस तलैटी पर राजगढ़ नाम का नया किला बनाया। यह किला पहाड़ी भाग की क्रमशः एक दूसरे से ऊँची, तीन उच्च भागों पर खड़ी की गई, एक दूसरे के पीछे तीन दीवारों से घेर कर सुरक्षित किया गया। बीजापुर दरबार में भी यह समाचार पहुँचे। शिवाजी ने चतुराई से दरबारी आदमियों को अपने साथ मिला लिया। शाहजी ने भी तोरण किले के किलेदार की अयोग्यता और शिवाजी की बीजापुर दरबार की भक्ति की चर्चा कर दरबार के क्रोध को शान्त किया। दादाजी कोंडदेव की मृत्यु के बाद शिवाजी ने यत्न किया कि पूना-सूपा की जागीर को अपने अधीन कर उसे एक संगठित प्रदेश के रूप में एक शासनतंत्र के नीचे रखा जाय। इस उद्देश्य की पूर्ति में शाहजी की दूसरी धर्मपत्नी का भाई शम्भुजी मोहिते बाधक था। वह शाहजी की ओर से सूपा की जागीर में रहता था। दादाजी के जीवन-

काल में कोई अड़चन पैदा न हुई। परन्तु दादाजी कोंडदेव की मृत्यु के बाद शम्भाजी मोहिते ने शिवाजी की आज्ञा मानने से इनकार किया और शाहजी से सीधी आज्ञा लेकर काम करना चाहा। शिवाजी इस आज्ञाभङ्ग को नहीं सह सकता था। शिवाजी ने मौका देखा। आमोद-प्रमोद के निमित्त उसको मिलने गया। आज्ञा मानने से इनकार करने पर उसको गिरफ्तार कर लिया। उसकी सम्पत्ति छीन कर अपने आधीन कर ली और उसे शाहजी के पास भेज दिया। सूपा के प्रदेश को भी अपनी जागीर में मिला लिया। चाकण किले के किलेदार फिरंगजी नरसाला, जागीर के पूर्वी भागों के थाना और बारामती के सरदारों ने भी शिवाजी की आधीनता स्वीकार की। पूना से ११ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर कोण्डाने का किला, आदिलशाह के सूबेदार को अपने साथ मिलाकर, अपने आधीन कर लिया।

पूना से १८ मील दक्षिण-पूर्व की ओर पुरन्दर का अभेद्य दुर्ग था। बीजापुर दरबार की ओर से इस किले पर नीलोनिकण्ठ नायक नाम का ब्राह्मण तैनात था। इस परिवार के लोग चिरकाल से इस किले के आसपास के प्रदेशों में प्रबन्ध करते थे। नीलोनिकण्ठ कठोर प्रकृति का पुरुष था। अपने छोटे भाई पिलाजी और शङ्कराजी को इस जागीर का किसी प्रकार का हिस्सा न देता था। इन दोनों ने शिवाजी को मध्यस्थ होकर फैसला करने के लिये निमन्त्रित किया। दिवाली के दिन अतिथि के रूप में शिवाजी को किले में निमन्त्रित किया। तीसरे दिन दोनों भाइयों ने अचानक अपने बड़े भाई को बेड़ियों में बांधकर शिवाजी के सामने उपस्थित किया। परन्तु शिवाजी ने

तीनों भाइयों को गिरफ्तार कर लिया और किले को अपने आधीन कर नीलोजी के सब नौकरों तथा पहरेदारों को निकाल दिया। उनके स्थान पर अपने मावले सरदारों को किले का रक्षक नियत किया। इसी सिलसिले में रोहिरा, तिगोना (पूना के उत्तर पश्चिम), लोहगढ़ आदि किलों को भी अपने आधीन कर लिया।

× × ×

इसके बाद शिवाजी ने उत्तर कोंकण में प्रवेश किया। कल्याण ज़िला में बीजापुर दरबार की ओर से अरब निवासी मुल्ला अहमद नाम का विदेशी सूबेदार शासन करता था। बीजापुर के बादशाह की बीमारी के कारण, इस सरदार को बीजापुर में रहना पड़ा। उसके पीछे इस प्रदेश का शासन-प्रबन्ध शिथिल हो गया था। जनता में असन्तोष फैलने लगा। इसी समय आबाजी सोनदेव के आधीन, मराठे घुड़सवारों ने इस प्रदेश पर हमला किया। कल्याण और भींडी नाम के स्मृद्ध नगरों से पर्याप्त सम्पत्ति प्राप्त की। माहली का किला भी जीत लिया। कल्याण का शहर और थाना के कुछ भाग शिवाजी के आधीन हो गये। शिवाजी के वीर सिपाही दक्षिण की ओर बढ़ते २ कोलावा ज़िला में पहुँचे। यहां के स्थानीय सरदारों ने मुसलमानी शासकों से स्वतंत्र होने के लिये शिवाजी को निमन्त्रित किया। सूरगढ़, बीरवाड़ी, ताला, घोसलगढ़, भूरप, मंगोही किलों के साथ कैरी (रायगढ़) के अभेद्य किले को भी अपने आधीन किया। यह रायगढ़ ही शिवाजी की राजधानी बना। इस प्रकार जञ्जीरा के अबिसीनियनों का कोलावा ज़िले का पूर्वी भाग भी शिवाजी के आधीन हो गया। आवश्यकतानुसार इन स्थानों पर वीरवाड़ी और तिगोना में (रायगढ़ से ५ मील पूर्व की ओर) दुर्गम पहाड़ी किले बनाये गये। शिवाजी ने

उत्तर कोंकण के इन विजित प्रदेशों का प्रबन्ध करने के लिये आबाजी सोनदेव को यहां का शासक नियत किया।

× × ×

शिवाजी के इन कार्यों से बीजापुर दरबार में खलबली मच गई। शिवाजी की प्रगति को रोकने के उपाय सोचे जाने लगे। शाहजी बीजापुर दरबार की ओर से कर्नाटक में शासन प्रबन्ध करते थे। दरबार ने उन पर दबाव डालकर शिवाजी की रोकथाम करनी चाही। बीजपुर दरबार की फौजें शाहजी के निरीक्षण में जिंजी किले को जीतने में जुटी हुई थीं। परन्तु उन्हें सफलता नहीं हो रही थी। शाहजी ने अपना आदमी भेज कर बीजापुर के नवाब मुस्तफ़ाखां से छुट्टी मांगी और कहा कि अनाज मंहगा हो गया है, सिपाही थक गये हैं अतः वह देर तक इस युद्ध को जारी नहीं रख सकते। नवाब मुस्तफ़ाखां ने बाजीराव घोरपड़े और जसवन्तराव आसदखानी को सेना के साथ, शाहजी को गिरफ्तार करने के लिये भेजा। शाहजी रात के आमोद-प्रमोद के कारण प्रातःकाल अभी सो ही रहे थे कि बाजीराव घोरपड़े ने उनके शिविर पर आक्रमण कर दिया। शाहजी अपने बचाव के लिये घोड़े पर सवार होकर अकेले निकल भागे। बाजीराव घोरपड़े ने ने उनका पीछा किया, और उन्हें गिरफ्तार कर नवाब के सामने पेश किया। बीजापुर के बादशाह आदिलशाह ने अफ़जलखां को शाहजी की सम्पत्ति ज़ब्त करने और उन्हें बीजापुर दरबार में हाज़िर करने के लिये भेजा। शाहजी बेड़ियों और जंजीरों में जकड़े हुए बीजापुर दरबार में लाये गये। वहां उन्हें कैद किया गया। उनकी कोठरी के दरवाजों में भी ईंटें चुनी जाने लगीं। इस प्रकार उन्हें भांति

भांति से, अपने पुत्र शिवाजी को राजद्रोही कारनामों से रोकने के लिये, तंग किया जाने लगा।

× × ×

राजद्रोही पुत्र के विद्रोह के कारण राजभक्त पिता को कैदी बनना पड़ा। अदूरदर्शी, अत्याचारी शासकों ने पुत्र के पापों के लिये पिता को, उसकी राजसेवाओं की उपेक्षा करके, कालकोठरी में डालकर भयंकर से भयंकर अत्याचारों की भूमिका बांधी। अत्याचारी स्वेच्छाचारी सरकारें, इस प्रकार के व्यवहार करने में संकोच नहीं करतीं। स्वेच्छाचारी शासकों का स्वभाव ही ऐसा हो जाता है। शिवाजी के सामने विषम समस्या उपस्थित थी। शिवाजी इससे विचलित नहीं हुए। उन्होंने मुगल बादशाह के पुत्र मुरादबख्श के पास अपना प्रतिनिधि भेजकर उसे बीजापुर दरबार के विरुद्ध आक्रमण करने के लिए उत्सहित किया और उसे आदिलशाही को मुगलदरबार के आधीन करने की आशा दिलाई। जिस समय शाहजी कैद में थे—उस समय बीजापुर दरबार ने बाजीश्यामराज को १०००० सिपाहियों के साथ शिवाजी को गिरफ्तार करने के लिये कोंकण में भेजा। शिवाजी चौल के प्रदेश में लूटमार कर रहे थे। श्यामजी उन्हें गिरफ्तार न कर सका। इसके विपरीत शिवाजी ने अपनी टुकड़ी भेज कर बाजीश्याम की सेना पर छापे मारकर उसे वापिस भेजा। बीजापुर दरबार के अधिकारियों को इसकी भनक मिली। बीजापुर दरबार के शरजाखां और रणदुल्लाखां ने बीच में पड़कर शाहजी को कैद से छुड़ा दिया। शिवाजी ने भी शाहजी के जीवनकाल तक बीजापुर दरबार के प्रदेशों पर आक्रमण न करने का आश्वासन दिया। जिंजी का किला जीतने के बाद शाहजी को रिहा कर

दिया गया। कैद से छूट कर शाहजी तुंगभद्रा प्रदेश में रहे और वहीं से अपनी जागीर का प्रबन्ध करते रहे।

१६४६–१६५५ ई० तक शिवाजी ने बीजापुर दरबार के किसी प्रदेश पर आक्रमण नहीं किया। यह समय विजित प्रदेशों को सुदृढ़ और सुरक्षित करने में व्यतीत किया। शिवाजी अनुभव करते थे कि जब तक जावली का प्रदेश नहीं जीता जायेगा और इसे मराठा-मंडल में शामिल नहीं किया जायगा, तब तक यह विजित प्रदेश सुरक्षित नहीं हैं। इसलिए शिवाजी जावली पर आक्रमण कर, उसे जीतने की तैयारियों में लग गये।

× × × ×

चन्द्रराव मोरे का खून

सतारा ज़िले के उत्तरपश्चिमी कोने में जावली नाम का ग्राम है। यह प्रदेश पहाड़ों और जंगलों से छाया हुआ है। जावली से कोंकण की ओर छोटे २ असंख्य नाले बहते हैं। १६ वीं सदी में मोरे नाम के मराठा वंश को बीजापुर दरबार से जावली का प्रदेश, वीरता के पुरस्कार में जागीर के तौर पर मिला था। इनके पास १२००० पैदल सेना थी। यह सिपाही मावलों की टक्कर के थे। बीजापुर दरबार ने इस वंश के वीर पुरुषों की वीरता से प्रसन्न होकर इन्हें 'चन्द्रराव' की पदवी दी थी। १६५२ ई० में कृष्णाजी बाजी जावली का शासक था। यह प्रदेश सैनिक दृष्टि से शिवाजी के लिये महत्वपूर्ण था। यहां के मराठे तथा इस प्रदेश की भौगोलिक स्थिति, शिवाजी के राज्य-विस्तार की योजना में अत्यन्त सहायक थी। शिवाजी ने रघुनाथ बल्लाल कोर्डे को १२५ चुने हुए वीरों के साथ जावली भेजा। उसने कृष्णाजी के सामने प्रस्ताव किया कि वह अपनी लड़की का विवाह शिवाजी के

साथ कर दे। इधर विवाह की बातचीत चल रही थी। इसी बीच में रघुनाथ बल्लाल ने वहां की स्थिति तथा जावली सरदार के स्वभाव तथा रहन-सहन का पूरा २ पता लिया। उसे मालूम हुआ कि वह शराबी है और असावधान-स्वभाव का है। शिवाजी के पास सूचना भेजी और उन्हें परिस्थितियों से लाभ उठाने के लिये, सेना के साथ समीपवर्त्ती प्रदेश में उपस्थित रहने की सलाह दी। बल्लाल ने चन्द्रराव मोरे से दूसरी भेंट एकान्त में की। प्रारम्भ २ में विवाह सम्बन्धी बातें विस्तार के साथ होती रहीं। चन्द्रराव का ध्यान इन बातों में लगा था कि बल्लाल ने एकदम अचानक खंजर खींच ली और चन्द्रराव पर हमला कर उसे यमलोक भेज दिया। उसके भाई सूर्यराव को भी ज़ख्मी किया। बल्लाल के साथी मराठे सिपाही ने सूर्यराव का भी प्राणान्त कर दिया। खूनी घातक एकदम दरवाजे से बाहर निकल भागे और समीप के जंगलों में सुरक्षित स्थान पर छिप गये।

शिवाजी भी बल्लालपन्त के संकेत पर तीर्थ यात्रा के निमित्त सेना सहित महाबलेश्वर पहुँचे हुए थे। चन्द्रराव की हत्या का समाचार मिलते ही वह जावली पहुँचे और जावली के किले के संरक्षकों पर आक्रमण कर दिया। छः घंटों तक घमासान युद्ध हुआ। दोनों ओर लड़ने वाले मराठे सिपाही थे। चन्द्रराव के दो पुत्रों और परिवार को कैद कर लिया गया। चन्द्रराव मोरे के सम्बन्धी, जागीर के प्रबन्धक हनुमन्तराव मोरे ने, समीप के गांव में सेना इकट्ठी कर शिवाजी का मुकाबला करना चाहा। शिवाजी ने हनुमंतराव का खून करने के लिये शम्भुजी कावजी नाम के मराठे सरदार को संदेश भेजने के बहाने से भेजा। दोनों की एकान्त में भेंट हुई। १६५४ में कावजी ने इस पर भी खंजर का वार कर इसे

परलोक भेजा। इस प्रकार जावली का सारा प्रदेश शिवाजी के आधीन हो गया। अब शिवाजी को दक्षिण कोंकण तथा कोल्हापुर प्रदेश पर आक्रमण करने से रोकने वाला कोई नहीं रहा। कई ऐतिहासिकों का कहना है कि मोरे के दोनों पुत्रों को पूना ले जाकर मार दिया गया। मोरे वंश के शेष व्यक्ति इधर-उधर तितरबितर हो गये। १६६५ ई० में महाराजा जयसिंह ने शिवाजी को पराजित करने के लिये इन मोरों से भी सहायता ली। शिवाजी को इस प्रदेश को जीत लेने से अपनी सेना के लिये लड़ाके सिपाही और कई वर्षों से संचित मोरों का कोष भी मिला।

जावली से दो मील पश्चिम की ओर प्रतापगढ़ नाम का नया पहाड़ी दुर्ग बनवाया। इस किले में अपनी आराध्या देवी भवानी की प्रतिमा स्थापित की। तुलजापुर की भवानी प्रतिमा दूर थी। शिवाजी ने समय-समय पर प्रतापगढ़ की भवानी को अनेक कीमती उपहारों से सुसज्जित किया।

जावली के पश्चिम की ओर कोंकण के मैदान में, रत्नगिरि ज़िले के मध्य में स्थित श्रृंगेरपुर पर शिवाजी ने आक्रमण किया। आसपास के छोटे मोटे सरदारों को भी अपने आधीन किया। इस प्रकार से रत्नगिरि का पूर्वी भाग भी शिवाजी के आधीन हो गया।

शिवाजी ने यह खून क्यों कराया? शिवाजी का इस हत्या से प्रत्यक्ष कितना सम्बन्ध था? मोरे जाति के वीर भी मराठे थे, शिवाजी ने साम नीति द्वारा, शान्ति द्वारा मोरे सरदारों को अपने साथ मिलाने का यत्न किया, मोरे घराने की कन्या के साथ विवाह करने का प्रस्ताव भी किया। इस पर भी जब जावली को अपने साथ मिलाने का कोई

रास्ता न मिला तो दूत को भेजा। दोनों में कहा-सुनी हो गयी। मोरों ने शिवाजी के सेनासहित महाबलेश्वर आने पर आपत्ति की। शिवाजी के दूत ने मोरों पर शिवाजी के साथ विश्वासघात कर आक्रमण करने का अपराध लगाया। बातों-बातों में तलवारें खिंच गईं। मोरे के निवास-स्थान पर शिवाजी के वीर दूत की तलवार का वार अचूक रहा। शिवाजी ने इस अवसर को न चूका। श्रीकृष्ण के पदचिह्नों पर चलते हुए, ब्राह्मण वेश धारण किए हुए भीम, अर्जुन द्वारा किये गये जरासंध-वध की भांति, अपने राज्य-विस्तार के कंटक को दूर किया। आसपास के छोटे मोटे सरदारों को, शराब पीने वाले मोरे सरदारों के तथा बीजापुर दरबार के अत्याचारों से मुक्त किया। यदि मोरे सरदार शान्तिपूर्वक शिवाजी का साथ देते तो शिवाजी के दूत को एक मराठे भाई के खून से अपनी तलवार रक्तरंजित न करनी पड़ती। शिवाजी के इस खूनी वार से आसपास के मराठे सरदारों तथा बीजापुर दरबार पर भारी आतँक छा गया। प्रतिपक्षी लोग शिवाजी और उसके अनुयायियों की छाया को मौत की छाया समझ कर भयभीत होने लगे।

× × ×

राजनीति की शतरंजी चालें

१६५३ ई० के बाद औरंगजेब दक्षिण भारत का शासक बन कर आया। इसने इधर आते ही बीजापुर पर आक्रमण करने की तैयारियां शुरू कीं। शिवाजी ने इस मौके से लाभ उठाकर मुग़लों के साथ मिलकर बीजापुर दरबार से छीने हुए प्रदेशों को स्थिर रूप में अपने आधीन करने के लिये मुगल बादशाह से सन्धि चर्चा शुरू की। अपने दूत औरंगजेब के पास भेजे। बीजापुर दरबार को इसका

पता चला। बीजापुर दरबार ने शिवाजी और मुगल दरबार को आपस में लड़ाने के लिये शिवाजी को मुगल प्रदेशों पर हमला करने की प्रेरणा की। औरंगजेब इस समय अपनी सेनाओं के साथ बीदर में रुका हुआ था।

शिवाजी ने मीनाजी भोंसले और काशी नाम के मराठे सरदारों को, तीन हज़ार सिपाहियों के साथ भीमा नदी पार कर, चमारगुंडा और रायसीन के प्रदेशों के मुगलाई ग्रामों को लूटने के लिये भेजा। इन सरदारों ने अपने तूफ़ानी हमलों से इस प्रदेश को खूब लूटा और अहमदनगर शहर तक वार किया। दूसर तरफ शिवाजी स्वयं जुन्नर के मुगलाई प्रदेश में लूटमार कर रहे थे। एक रात जुन्नर शहर की चारदीवारी पर शिवाजी चुपचाप रस्सी की सीढ़ियों से चढ़ गये। पहरेदार को मौत के घाट उतार कर वहां से ३ लाख हून, २०० घोड़े, कीमती जवाहरात और कपड़े लूट में ले गये। इन समाचारों ने औरंगजेब को हैरान कर दिया। उसने अपने सरदारों को मराठा विद्रोही सरदारों को मुगल प्रदेशों से निकालकर, शिवाजी के प्रदेशों पर आक्रमण करने का हुक्म दिया। मुल्तफ्तखान और नासिरखान ने मराठे सरदारों की लूटमार की रोकथाम कर, अहमदनगर और जुन्नर को मराठों से खाली किया। इन्हीं दिनों १६५७ ई० में शाहजहां की बीमारी के कारण शाहजहां के बेटों में राजगद्दी का उत्तराधिकारी बनने के लिये युद्ध शुरू हो गया। इधर बीजापुर दरबार ने मुगलों से संधि कर ली। यह अवस्था देखकर शिवाजी ने मुगलों के साथ अकेले युद्ध करना व्यर्थ समझा और रघुनाथ बल्लाल को औरंगजेब के पास सुलह के लिये भेजा। औरंगजेब राजगद्दी के युद्धों के लिये उत्तर भारत

की यात्रा करने को तैयार हो चुका था इसलिये उसने सोनाजी को शिवाजी के प्रतिनिधि के रूप में, मुगल दरबार में भेजने की स्वीकृति दे कर पूना-सूपा-कोंकण की जागीरों पर शिवाजी का अधिकार स्वीकार किया ।

परन्तु दूसरी ओर गुप्त रूप से, औरंगजेब ने अपने सरदार मीरजुमला और बीजापुर के बादशाह आदिलशाह को हुक्म दिया कि शिवाजी को सिर मत उठाने दो । उसे मुगलाई प्रदेशों से दूर कर्नाटक में, जागीर देकर उसकी सेवा से फायदा उठाओ । पूना कोंकण आदि प्रदेशों से निकाल कर उसके किलों को जीत लो । मुगल दरबार और बीजापुर दरबार मिलकर शिवाजी का दमन करने की तैयारियां करने लगे । अस्तु ! शिवाजी शत्रुओं की इन चालों को समझते थे । उन्हों ने औरंगजेब के दक्षिण से उत्तर भारत को रवाना होते ही बीजापुर दरबार की अन्दरूनी दुर्बलताओं से लाभ उठाकर राज्य-विस्तार के लिये अपने वीर सिपाहियों को तैनात किया । इधर बीजापुर दरबार ने भी औरंगजेब को दक्खिन से उत्तर जाते देख कर, बीजापुर दरबार के प्रधान मन्त्री खवासखान और बेगम बड़ी साहिबा ने विद्रोही सरदारों का दमन करना शुरू किया । दरबार की नज़र शिवाजी की उच्छृङ्खलताओं पर पड़ी । शिवाजी का दमन करने के लिये सेना भेजने का निश्चय किया गया । परन्तु शिवाजी के चमत्कारों के जादू के कारण उस सेना का सेनापति बनने को कोई उद्यत नहीं होता था । बीजापुर दरबार ने इस काम के लिये बीजापुर दरबार के विश्वासपात्र अनुभवी सरदार अफ़ज़लखान को नियत किया ।

☆

४

अफ़ज़लखां की तलवार और शिवाजी का बाघनखा

आततायिनं मायान्तं हन्यादेवाविचारयन्[1]

बीजापुर दरबार में अफ़ज़लखान [जो अब्दुल्ला भटियारा नाम से भी प्रसिद्ध था, भटियारा अर्थात् रसोई पकाने वाले खानदान में से था] अपनी शूरवीरता और दूरदर्शिता के लिये प्रसिद्ध था। बीजापुर की बड़ी-बेग़म ने शिवाजी का दमन करने के लिये १०००० सिपाहियों के साथ इसे बुला भेजा और हुक्म दिया कि शिवाजी का सिर दरबार में हाज़िर करो। अफ़ज़लखां ने भरे दरबार में, शिवाजी को दरबार में कैदी के रूप में पेश करने की प्रतिज्ञा की। अफ़ज़लखां चाहता था कि रक्तपात किये बिना कुटिलनीति द्वारा ही शिवाजी को हाथिया ले। शिवाजी की सेनाओं के चुपचाप छुपे गुरिल्ला हमलों से वह भी घबराता था। उसने तलवार और कुटिलनीति दोनों के प्रयोग करने का निश्चय किया। १०,००० घुड़सवार फौज के साथ बीजापुर से प्रस्थित हुआ। बीजापुर से अफ़ज़ल की सेना उत्तर की ओर तुलजापुर की ओर बढ़ी। तुलज़ापुर का मन्दिर महाराष्ट्र के पवित्रतम मंदिरों में से एक विशेष मंदिर माना जाता है। यहां भोंसला वंश की अधिष्ठात्री देवी भवानी की प्रतिमा थी। अफ़ज़लखां ने सोचा कि मौका देख कर या तो सीधा मराठा राष्ट्र के पूर्वी भाग से पूना पहुँच कर शिवाजी के दक्षिणी किलों को

---

[1] हत्यारे घातक को मारने से मत चूको।

घेरा जाय अथवा शिवाजी को किसी प्रकार से खुले मैदान के रणांगण में बीजापुर की भारी साधन-सम्पन्न सेना से मुकाबला करने पर बाधित किया जाय। शिवाजी की भावनाओं को ठेस पहुँचाने और उन्हें प्रत्यक्ष आक्रमण के लिये उत्तेजित करने के लिये अफ़ज़लखां ने तुलजापुर की भवानी प्रतिमा को तोड़कर उसे चक्की में पिसवाकर चूरचूर कर दिया। इतने में उसे पता लगा कि शिवाजी तो राजगढ़ छोड़ कर प्रतापगढ़ के क़िले में आ गये हैं। इस पर अफ़ज़लखां ने पूना की ओर प्रस्थित होने के स्थान पर अपनी सेनाओं की बागडोर प्रतापगढ़ की ओर मोड़ी। लौटते हुए रास्ते में तीर्थस्थानों में मूर्तियां तथा ब्राह्मणों को अपमानित करते हुए वह राक्षस सतारा से उत्तर की ओर २३ मील पर 'वाई' नामक स्थान पर पहुँचा। यह प्रदेश बीजापुर दरबार के आधीन था। यहीं अफ़ज़लखां ने अपना शिविर लगाया। यहां ठहर कर उसने शिवाजी को पर्वतीय प्रदेशों से बाहर मैदान में लाने के लिये कई प्रकार के रंग-ढंग किये। स्थानीय मराठा सरदारों द्वारा शिवाजी की जीते जी गिरफ्तार करने की भी कोशिश की परन्तु शिवाजी अपनी तथा शत्रु की शक्ति को खूब समझते थे। वह समझते थे कि दूसरे के मैदान में जाकर विजय पाना कठिन है। वह इस कोशिश में थे कि बीजापुर की सेनाएं पहाड़ियों में घिर जायें और वहां मराठे अपने गुरिल्ला आक्रमणों से उन्हें हैरान करें। अफ़ज़लखां ने विठोजी·हैवतराव नाम के मराठे सरदार को अपने सिपाहियों के साथ जावली के पास बीजापुर की सेना के साथ आने की आज्ञा दी। खंडोजी खोपड़े नाम के सरदार ने वहीं पहुंच कर रोहिडखेरे इलाके की देशमुखी मिलने की आशा पर, शिवाजी को गिरफ्तार कर हाज़िर करने की लिखित प्रतिज्ञा की। अफ़ज़लखां मराठे

सरदारों की सहायता से शिवाजी को गिरफ्तार करने की कोशिश में था। वह मुगल बादशाहों की भांति, राजपूताना के राजपूत राजाओं को एक दूसरे से लड़ा कर, भेद-नीति द्वारा अपना उद्देश्य पूरा करना चाहता था। मुगल बादशाह सफल हो गये थे क्योंकि राजपूत राजाओं की प्रजाएं मूक और निर्जीव थीं। राजपूत राजाओं और उनकी प्रजाओं के बीच में कई प्रकार की भेद-भाव की दीवारें खड़ी थीं। राजपूताना की जनता राजपूत राजाओं की मुसीबतों को अनुभव नहीं कर सकती थीं। ठाकुरों और सरदारों ने जनता को जागृत नहीं होने दिया था। केवल उदयपुर के महाराणा प्रताप ने राजपूताना की साधारण भील जनता के साथ सीधा सम्बन्ध रखा। भील राणा के लिए मर मिटने को तैयार हो गये, और कोई भी प्रबल बादशाह चित्तौड़ की स्वाधीनता की पताका को नीचे न झुका सका। महाराष्ट्र में शिवाजी के व्यक्तित्व ने साधारण मराठा जनता को शिवाजी का भक्त बना दिया था। इने-गिने मध्यम श्रेणी के मराठा सरदारों की कुछ न चलती थी। शिवाजी की मूर्ति को देखते ही, उनका शंखनाद सुनते ही, मराठा जनता दक्खनी और मुगलाई बादशाहों को छोड़कर शिवाजी की 'जय जय' करने लगती थी। अफ़ज़लखान के धार्मिक अत्याचारों ने, उसकी मूर्त्ति-ध्वंस की नीति ने, मराठों को शिवाजी का अनन्य भक्त बना दिया। जनता की इस अटल भक्ति के कारण अफ़ज़लखान की भेदनीति काम न आई। लाचार उसने साम-पूर्ण छल-नीति द्वारा शिवाजी को जीतना चाहा। कृष्णाजी भास्कर नाम के दूत को शिवाजी के पास निम्नलिखित संदेश के साथ भेजा—

"तुम्हारे पिता मेरे गहरे दोस्त थे। तुम मेरे लिये अजनबी नहीं

हो, मेरे पास आओ। मुझे मिलो। मैं अपने प्रभाव से तुम्हें कोंकण का प्रदेश और वह किले जो इस समय तुम्हारे पास हैं, तुम्हारे नाम बीजापुर दरबार से भी स्वीकृत करा दूंगा। बीजापुर दरबार से तुम्हारे लिये अनेक प्रकार के फौजी और दीवानी सम्मानसूचक उपाधियां तथा पुरस्कार दिलाऊँगा। यदि तुम चाहोगे तो तुम्हें राजदरबार में सम्मान का स्थान दिया जायगा और यदि तुम स्वयं उपस्थित न होना चाहोगे तो इससे मुक्त भी किया जा सकेगा।"

शिवाजी ने कृष्णाजी भास्कर का ब्राह्मणोचित सत्कार किया। एकान्त में उसकी धार्मिक भावनाओं को, तुलजापुर की प्रतिमा भंग आदि की घटनाएं सुना कर उत्तेजित किया। अफ़ज़लखान के दिल की टोह ली और पता लगा लिया कि अफ़ज़ल उसके साथ छल-बल का प्रयोग करने में भी संकोच न करेगा। दूत के साथ पंडित गोपीनाथ पन्त को भेजा और अफ़ज़लखान के साथ भेंट करने के लिये सहमति प्रकट की और अफ़ज़लखान से अपनी जीवनरक्षा का आश्वासन चाहा। शिवाजी ने गोपीनाथ द्वारा भेंट के समय अपनी ओर से अफ़ज़लखान की रक्षा का आश्वासन दिया। साथ ही उसे अफ़ज़लखान के सैन्य-बल तथा उसके असली भाव का पता लेने के लिये सावधान किया।

पंडित गोपीनाथ ने मिलनसार नीति और चतुरतासे अफ़ज़लखां के दरबारियों से पता लगा लिया कि उसका असली भाव भट द्वारा शिवाजी को गिरफ्तार करने का है। पंडित गोपीनाथ ने वहां से लौट कर शिवाजी के सामने सारी स्थिति रखी, और उन्हें अफ़ज़लखान के द्वारा संभावित छल से सावधान तथा सतर्क कर स्वयं मौके से लाभ उठाने का संकेत किया।

शिवाजी ने सारी स्थिति को समझ लिया। अफ़ज़लखान चाहता था कि शिवाजी उसे 'वाई' के मैदान में मिलें। शिवाजी ने यह स्वीकार नहीं किया और प्रतापगढ़ किले के समीप भेंट का स्थान निश्चित करने पर आग्रह किया, और अफ़ज़लखान से अपनी जीवनरक्षा का आश्वासन चाहा। अफ़ज़लखान ने इसे भी स्वीकार कर लिया। शक्ति-मद और उच्च स्थिति के अभिमान में अफ़ज़लखान इस मांग को टाल न सका। वह समझता था कि एक बार यदि एकान्त में भेंट हो जाय तो मैं शिवाजी को अपने चंगुल से निकलने न दूंगा। जाल में फंसी मछली निकल नहीं सकती। रणांगण में न सही, एकान्त भेंट में ही उसे तलवार की धार उतार कर सदा के लिये बीजापुर दरबार के कंटक को उखाड़ दूंगा। अफ़ज़लखान ने इस उत्सुकता और उत्कंठा में अपना मैदानी स्थान छोड़कर पहाड़ियों से घिरे स्थान पर भेंट करना स्वीकार किया। मगरमच्छ ने पानी से बाहर, रेतीले पथरीले मैदान में शिवाजी को गिरफ्तार करने का, जीते-जी पकड़ने का संकल्प किया। शिवाजी ने वाई से प्रतापगढ़ किले के बीच के घने जंगलों के बीच में एक रास्ता बनाने की आज्ञा दी। रास्ते के दोनों ओर स्थान २ पर बीजापुर की सेना के सिपाहियों के लिये खाने-पीने के सामान जुटाए गये। रतौंडी दर्रे के पास (महाबलेश्वर के बौम्बेया पायण्ट के नीचे) अफ़ज़लखान 'पार' नाम के गांव की ओर बढ़ा। यह गांव प्रतापगढ़ किले से दक्षिण की ओर एक मील पर है। अफ़ज़लखान के सिपाहियों ने कयना नदी के निकास तक, टोलियां बना कर पानी के छोटे-मोटे तालाबों के आसपास डेरे डाल लिये। गोपीनाथ पन्त ने शिवाजी को अफ़ज़लखान के 'पार' स्थान पर पहुँचने की सूचना दी। अगले दिन भेंट का समय नियत किया गया।

प्रतापगढ़ किले के नीचे और कयना की घाटी पर अवस्थित ऊंचाई की समतल भूमि पर तम्बुओं से घिरी हुई चित्रित सुसज्जित चांदनी खड़ी की गई। आलीशान गलीचे, दरियां तथा कीमती राजोचित शोभा वाले, आसन मंच सजाए गए।

शिवाजी ने अपने आप को इस भेंट के लिये तैयार किया। अंगरखे के नीचे लोहे का कवच पहना। सिर पर लोहे की टोपी के ऊपर पगड़ी बांधी। बांएं हाथ की अंगुलियों में दो अंगूठियों में बाघनखा और दाईं बांह की आस्तीन में बिछुआ छिपा रखा।

अपने साथ जीवमहला और शम्भाजी कावजी नाम के मराठे सरदारों को लिया। दोनों विश्वासपात्र, शूरवीर और तलवार चलाने के द्वन्द्व युद्ध में अपने समय के इने-गिने वीरों में से थे। त्रिमूर्ति निश्चित कार्य के लिये प्रतापगढ़ से चली। रास्ते में राजमाता ने, तीनों को वात्सल्यरस सिंचित आशीर्वाद दिया। त्रिमूर्ति प्रतापगढ़ की तलहटी पर जाकर प्रतीक्षा करने लगी।

अफ़ज़लखान पालकी में सवार होकर दो सिपाहियों और सैय्यद बन्दा नामक प्रसिद्ध तलवार-वीर के साथ भेंट के स्थान की ओर प्रस्थित हुआ। शेष सेना 'पार' स्थान पर रुकी रही। साथ में कृष्णाजी भास्कर और गोपीनाथ पन्त भी थे। शिविर में पहुंचते ही अफ़ज़लखां उस शामियाने की शानशौकत व सजावट को देखकर खिसियाया और जागीरदार के लड़के की इस आनशान की सजावट पर खिजावट प्रकट की। गोपीनाथ पन्त ने वाक्चातुरी से उत्तर दिया कि यह सब सामान भेंट के बाद शिवाजी भेंट रूप में, बीजापुर दरबार की नज़र में पेश

करेंगे। शिवाजी के पास शीघ्र आने के लिये दूत भेजे गये। शिवाजी ने दूर से ही सैय्यद बन्दा को देख कर कहा कि इसे अफ़ज़ल खान के शिविर से दूर रखना चाहिये क्योंकि नियमानुसार दोनों ओर के दोनों रक्षक सिपाही ही होने चाहिएं थे। शिवाजी के प्रतिवाद पर उसे रोक दिया गया। भेंट के लिये निश्चित शिविर में दोनों पहुंचे। दोनों ओर से चार २ आदमी उपस्थित थे। दो दो सशस्त्र सिपाही, एक एक दूत तथा स्वयं शिवाजी और अफ़ज़लखान। अफ़ज़लखान की कमर में तलवार लटक रही थी। शिवाजी निःशस्त्र थे। अफ़ज़लखां ऊंचे मंच पर था। शिवाजी मिलने के लिये मंच पर चढ़े और अफ़ज़लखां के सामने दरबारी सरदारों की भांति सम्मान प्रकट करने के लिये झुके। अफ़ज़लखान अपने स्थान से उठा। कुछ कदम आगे बढ़ा, और भुजाएं फैलाकर शिवाजी का आलिंगन करने लगा। शिवाजी कद में छोटे थे। अफ़ज़लखान के कन्धों तक पहुँचते थे। अफ़ज़लखां ने एकदम अपनी पकड़ को सख्त किया, शिवाजी की गर्दन को बाएँ हाथ की पकड़ से दबोचा, और दांए हाथ से पास लटक रही तलवार को खींच कर शिवाजी की कमर पर वार किया। शिवाजी इस अचानक आक्रमण से, गले में दबोचा जाने से कहराने लगे परन्तु एकदम अपने आपको संभाल लिया, गुरु रामदास के अमोघ राममन्त्र "शठेशाठ्यं" का स्मरण किया। एकदम बाएं हाथ को अफ़ज़लखां की कमर में भोंककर उसकी अन्तड़ियों को फाड़ दिया और दाएं हाथ के बिछुए को उसके दूसरे पार्श्व में झोंक दिया। आहत अफ़ज़लखान को अपनी पकड़ ढीली करनी पड़ी। शिवाजी ने अपने को उसके चंगुल में से निकाल लिया। मंच स्थान से छलांग मार कर उतर पड़े और बाहर खड़े अपने साथियों से जा मिले।

दोनों पक्षों के सिपाहियों में भगदड़ मच गई। सैय्यद बन्दा ने अपनी तलवार का वार करके शिवाजी को रोकना चाहा, और उनके सिर पर वार भी किया। लोहे की टोपी पर तलवार टकरा कर कुन्द हो गई। शिवाजी ने जीवमहाल नाम के मराठा सरदार से खुखरी (छोटी तलवार) लेकर उसका मुकाबला किया। इतने में जीवमहाल दूसरी तलवार लेकर आ गया और सैय्यद बन्दा की दायीं भुजा काट दी और उसे यमलोक का यात्री बनाया। इधर अफ़ज़लखां को पालकी में बिठाकर उसके साथी उसे शिविर की ओर ले जाने लगे। शम्भुजी कावजी ने पालकी उठाने वालों की टांगों पर अचूक गहरी चोटें कीं। उन्होंने पालकी वहीं छोड़ दी। तत्क्षण कावजी ने अफ़ज़लखाँ का सिर धड़ से अलग कर दिया। कटे हुए सिर को शिवाजी के सामने पेश किया।

शिवाजी और उनके दोनों साथी प्रतापगढ़ क़िले के शिवर में पहुंचे और वहाँ पहुँचकर उन्होंने अफ़ज़लखां के मारे जाने और स्वयं सुरक्षित वापिस पहुंचने का संकेत करने के लिये तोपों के गोले छोड़े! तोपों की आवाज़ सुनते ही रास्ते में दोनों ओर के जंगल में छिपी हुई मराठी सेना वानरों की टोलियों की भांति बाहर निकल आई और बीजापुर दरबार की सेना को चारों ओर से घेर लिया। तीन चार घण्टों तक घमासान युद्ध होता रहा। मराठी सेना रणक्षेत्र के चप्पे-चप्पे से परिचित थी। बीजापुर दरबार की सेना को भारी हार खानी पड़ी। अनेकों कैदी किये गये। खज़ाना तथा युद्ध-सामग्री मराठी सेना के हाथ में आई। कैदियों में अफजलखां की औरतें और उसके लड़के

और लम्बाजी भोंसले और झुझारराव घोर भी थे। अगले दिन सब कैदी प्रतापगढ़ किले में शिवाजी के सामने पेश किये गये। शिवाजी ने सब कैदियों को रिहाकर उन्हें घर जाने के लिये आवश्यक सामग्री के साथ विदा किया। मराठा सिपाहियों को उनकी शूरवीरता तथा चतुराई के लिये पारितोषिक तथा भेंटें दी गईं। इस युद्ध में आहत सिपाहियों को औषधोपचार के साथ इनाम भी दिये गये। मराठा सरदारों को हाथी, घोड़े और कीमती कपड़ों के साथ हीरे जवाहर भी दिये गये।

अफ़ज़लखां को जीतने के कारण मराठी सेना ने उत्साहित होकर दक्षिण कोंकण और कोल्हापुर के जिलों में आक्रमण किये। शिवाजी ने बीजापुर की सेना को हराकर पन्हाला का किला अपने आधीन कर लिया। (१६५९—१६६०)

इस विजय ने मराठी जनता में चमत्कारी उत्साह पैदा कर दिया। बीजापुर दरबार इस पराजय से झुंझला उठा। तात्कालिक मुसलमान शासकों के अत्याचारों से पीड़ित जनता शिवाजी को अपना रक्षक समझने लगी। घटनाओं के इस क्रम में, वीरता और चतुरता की सन्धि की सुनहरी किरणों में, आर्य जाति को अपने भाग्योदय के सूर्य की आकर्षक दिव्य झलक दीखने लगी। वीर भूषण कवि ने उस समय की आर्य जनता के इन भावों को अपनी कविता की झंकार साथ प्रकट कर शिवाजी को जाति-रक्षक राष्ट्रीय नेता के रूप में चित्रित किया।

\+ + + +

५

शिवाजी की अग्नि-परीक्षा

इस विजय ने शिवाजी तथा उनकी मंडली को मुगल दरबार और बीजापुर दरबार की सम्मिलित कोपाग्नि की परिक्षा में डाल दिया। इस परीक्षा में सफलतापूर्वक उत्तीर्ण होने के लिये शिवाजी को अनेकों बलिदान करने पड़े अपने आप को दिन रात रणचण्डी की ज्वालाओं की लपटों में झुलसाये रखना पड़ा।

बीजापुर दरबार के अलि आदिलशाह द्वितीय ने शिवाजी जैसे अदम्य विद्रोही को दमन करने के लिये स्वयं सेना के साथ रणांगण में उतरने का निश्चय किया। इसी समय सीदी जौहर नाम के अबीसीनियन गुलाम ने बीजापुर दरबार को लिखा कि यदि दरबार उसकी कर्नूल की जागीर स्वीकार करले, तो वह बीजापुर दरबार की ओर से शिवाजी का दमन करने के लिये अपनी सेवायें देने को तय्यार है। बादशाह ने सीदी जौहर की मांग को स्वीकार किया और उसे सलावत खाँ की उपाधि देकर भारी सेना के साथ शिवाजी को परास्त करने के लिये भेजा। दूसरी तरफ पूना ज़िले में मुगल सेनाएँ शिवाजी के किले छीन रही थीं इधर सीदी जौहर ने शिवाजी पर आक्रमण कर दिया। शिवाजी की सेनाओं को मैदान छोड़ना पड़ा और शिवाजी अपनी सेनाओं के साथ पन्हाला किले में घिर गये। शिवाजी इस समय लाचार थे। उन्होंने सीदी जौहर को गुप्त पत्र लिखकर उसके साथ दोस्ती करने का प्रस्ताव किया। मह-

त्वाकांक्षी सीदी जौहर ने शिवाजी के साथ मिलकर दक्षिण में स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने की आशा से शिवाजी के साथ एकान्त में भेंट करनी स्वीकार करली। शिवाजी ने मध्य-रात्रि में, दो-तीन आदमियों के साथ सीदी जौहर से मुलाकात की और स्वयं उसके दरबार में उपस्थित हुए। वहां दोनों ने एक दूसरे की रक्षा की प्रतिज्ञाएं कीं। शिवाजी किले में वापिस चले गये। सीदी जौहर किले का घेरा डाले पड़ा रहा।

बीजापुर दरबार में जब यह समाचार पहुँचा तो बादशाह अत्यन्त क्रोधित हुआ और सेना लेकर स्वयं दोनों विद्रोहियों को दण्ड देने के लिये राजधानी से चल पड़ा। बादशाह ने दूत भेजकर सीदी जौहर को अपने साथ मिलाने की कोशिश की, पर सफलता न हुई। बादशाही सेना मिरज तक जा पहुँची। सेना की एक टुकड़ी कुछ आगे पन्हाला किले की ओर बढ़ी। शिवाजी एक रात को अपने परिवार तथा ५००० सिपाहियों के साथ किले से निकल कर चले गये। पन्हाला किला बिना युद्ध के आदिलशाह के आधीन हो गया।

बाजीप्रभु का बलिदान

शिवाजी के किले से निकल भागने की खबर बादशाह को मिली। उसने तत्काल सीदी जौहर के बेटे सीदी अज़ीज़ और अफजलखाँ के बेटे फ़ज़लखाँ को बीजापुर सेना के साथ शिवाजी का पीछा करने के लिये भेजा। शिवाजी ने मलकपुर के समीप पहाड़ी घाटी के गहरे नाले के प्रवेश-स्थान पर बाजीप्रभु को ७०० वीरों के साथ बीजापुरी सेना का मुकाबला करने के लिये तैनात किया; और आदेश दिया कि जब तक मराठी सेना

विशालगढ़ किले में सुरक्षित न जा पहुंचे तब तक वह वहां बीजापुरी सेना का मुकाबला करता रहे। बीजापुर की सेना ने तीन बार आक्रमण किया और बाजीप्रभु के सिपाहियों को पीछे हटाकर शिवाजी का पीछा करने के लिये रास्ता खोलने का यत्न किया। परन्तु बाजीप्रभु और उसके वीर साथियों ने, थर्मापली के वीरों की भांति कट-कट कर गिरना स्वीकार किया, परन्तु बीजापुर की सेना को एक कदम भी आगे बढ़ने न दिया। बाजीप्रभु का एक-एक सिपाही बीजापुर दरबार के सैकड़ों सिपाहियों को रोक रहा था। यह वीर जी-जान पर खेल रहे थे। जान हथेली पर थी, कान विशालगढ़ किले की तोप की आवाज़ की प्रतीक्षा में थे। बाजीप्रभु अकेला था। उसके सामने सीदी जौहर का बेटा और अफ़ज़ल खाँ का बेटा खून का बदला लेने के लिये बेताब थे, परन्तु बाजीप्रभु ने जीते-जी किसी को आगे न बढ़ने दिया। आखिर चारों ओर से आक्रमण होने लगे। बाजीप्रभु ज़ख्मी होकर गिर गया! घाव गहरा था पर उन्हें अब भी यह चिन्ता सता रही थी कि कहीं शिवाजी के विशालगढ़ पहुंचने से पहले शत्रु सेना को इस घाटी से रास्ता न मिल जाय!! ज़ख्मों की पीड़ा उसे न सताती थी। वह बलिदान का अमृत पान कर अमर हो चुका था, परन्तु शिवाजी की चिन्ता उसे चिन्तित कर रही थी। इधर शिवाजी, बाजीप्रभु के ७०० वीर मराठों और बीजापुर की सेनाओं की घमासान लड़ाई की कल्पना कर, हवा की गति से विशालगढ़ ओर बढ़ रहे थे। बाजीप्रभु धराशायी हो चुका था, परन्तु अभी तक प्राण बाकी थे। शिवाजी ने अपने वीर सिपाही की इच्छा को पूरा किया। विशालगढ़ के किले से तोप दागी गई। 'शाबाश बाजीप्रभु' की ध्वनि ने आकाश

को गुंजा दिया । इस आवाज़ को सुनकर बाजीप्रभु ने शांति और सन्तोष के साथ प्राणों को जोड़ा । विशालगढ़ की सेनायें 'बाजीप्रभु की जय' के नाद गुँजाने लगीं । हताश बीजापुरी सेना वीर बाजीप्रभु के रक्तामृत से सिंचित घाटी को पार न कर सकीं और वहां से वापस चली गईं ।

★

६

औरंगजेब और शिवाजी

औरंगजेब उत्तर भारत में अपने भाइयों को परास्त करके और अपने पिता को राजबन्दी बनाकर दिल्ली के सिंहासन पर आसीन हो गया था। आलमगीर औरंगजेब बादशाह के नाम से, शासन करने लगा। सबसे पहले उसकी दृष्टि दक्षिण के स्वतन्त्र मुसलमान और हिन्दू राजाओं की ओर गई। अफ़ज़लखान के वध तथा बीजापुर दरबार के अंदरूनी झगड़ों ने उसको इस बात के लिये तय्यार किया कि वह शिवाजी का दमन करने के लिये अपनी सेनाओं का रुख़ उधर करे। इसके लिये अपने अनुभवी और प्रसिद्ध सेनापति शायस्ताखाँ को भारी सेना के साथ शिवाजी का दमन करने के लिये भेजा। औरंगजेब ने यह समझ लिया था कि दक्खिन की आदिलशाही कुछ दिनों की मेहमान है। उसने इस बात को ताड़ लिया था कि दक्खिन में उसका असली प्रतिद्वन्दी शिवाजी है। शिवाजी की वीरता, चतुराई, स्फूर्ति और संगठन-कुशलता को वह अच्छी तरह समझता था। उत्तर भारत तथा दिल्ली की विद्रोही शक्तियों को नियन्त्रण में रखने के लिये एवं अपने सिंहासन को सुरक्षित रखने के लिये अभी वह दिल्ली व आगरा में ही रहना चाहता था। आगरा व दिल्ली में रहते हुए भी उसका ध्यान शिवाजी की बढ़ती हुई शक्ति को रोकने में व्यग्र रहता था। उसने अपने मामा, अपने समय के प्रसिद्ध अमीर, नवाब शायस्ताखाँ को राजा यशवन्तसिंह के साथ शिवाजी का दमन करने के लिये भेजा।

शायस्ताखां ने दक्षिण में आते ही बीजापुर दरबार को दक्षिण दिशा से शिवाजी पर आक्रमण करने के लिये प्रेरित किया। स्वयं अहमदनगर से पूना, चाकन तथा उत्तरी-कोंकण पर आक्रमण करने शुरू किये। बीजापुरी सेनाओं के आक्रमणों के कारण शिवाजी विशालगढ़ किले में घिर गये।

इधर शायस्ताखाँ की सेनाओं ने उत्तर महाराष्ट्र में शिवाजी के किलों को जीतना शुरू किया। शिवाजी इधर न आ सकते थे। २५ फरवरी १६६० में शायस्ताखाँ ने अहमदनगर से विशाल सेना के साथ दक्षिण की ओर कूच किया। पूना के पूर्व की ओर दक्षिण भाग तक वह बे-रोकटोक बढ़ता गया। सोनवाड़ी के रास्ते से बारामती पहुंचा। १८ अप्रैल को पूना से दक्षिण में २६ मील की दूरी पर शिरवाल स्थान पर पहुंचा। शायस्ताखाँ जिन किलों को जीतता था, उन पर अपने सरदार तैनात करता जाता था। उसकी सेना ने राजगढ़ के चारों ओर के गांवों को तहस-नहस कर दिया।

शिरवाल से शिवपुर होती हुई मुगलसेना १ मई को ससवाड जो (शिवपुर से पूर्व १३ मील और पूना से दक्षिण-पूर्व १६ मील पर है) पहुंची। यहाँ मराठी सेना के ३००० सिपाहियों ने मुगलसेना को रोकना चाहा, परन्तु लड़ाई के बाद उन्हें मैदान छोड़ना पड़ा। मुगल सेना ने ससवाड के आसपास आक्रमण करने शुरू किये। पुरंदर किले की तलैटी के गांवों में लूटमार करने लगी। मराठी सेना ने उन पर हमला किया। मुगलसेना मे दृढ़ता से मुकाबला किया। मुगलसेना के कई सिपाही मारे गये, कई जख्मी हुए। इतने में मुगलसेना में और भी सिपाही आ सम्मिलित हुए। उन्होंने मराठी सेना का पीछा किया। पुरंदर किले की गोला

बारी की बौछार में भी मुगलसेना ने मराठा सिपाहियों का पीछा किया। मराठी सेना को तितर-बितर होना पड़ा। उत्तर कोंकण में मुगलसेना ने सेनापति इस्माइल के आधीन इस किले को भी जीत लिया। यह प्रदेश सलावतखाँ दक्खनी के आधीन कर दिया गया। शायस्ताखां अपनी सेना के साथ पूना पहुँचा और बरसात के मौसम तक यहीं रहने का निश्चय किया परन्तु मराठी सेना ने इसके आसपास के प्रदेशों को उजाड़ कर दिया। और बरसात में नदियों में बाढ़ आने से मुगलाई सरहद और पूना के बीच में यातायात में बहुत कठिनाई होने लगी। सामान की तंगी के कारण सेना को बहुत मुश्किल होने लगी। इस दशा में शायस्ताखाँ ने अपना सैन्य शिविर पूना से हटा कर चाकण में ले जाने का निश्चय किया। यह स्थान अहमदनगर और मुगलाई प्रदेश के समीप था। यहां सब प्रकार की रसद और सहायता बे-रोकटोक पहुँच सकती थी।

× × × ×

चाकण का किला और फिरंगजी की वीरता

चाकण का किला युद्ध-संचालन की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान था। इसके पूर्व में भीमानदी के उथले पाट हैं, कोई कठिन पहाड़ी दर्रा इसके पास नहीं है। मुगलाई प्रदेश से यहां तक आना जाना सरलता से हो सकता है। शायस्ताखाँ को इसके आधीन कर लेने से अहमदनगर से रसद मंगाने में बहुत आसानी थी। अहमदनगर से कोंकण जाने का छोटे से छोटा मार्ग चाकण के किले की छाया में है। शायस्ताखाँ पूना से १९ जून को चल कर २१ जून को चाकण के समीपवर्त्ती प्रदेश में पहुँचा। सारी स्थिति का अवलोकन कर, सरदारों के साथ परामर्श कर

किला जीतने की योजना बनाई। चाकण का किला, चौतर्फा घेरे वाला और आगे बढ़े हुए अग्र-भागों वाला था। इसके चारों कोनों पर चार गुम्बज़ थे। इसकी ऊँची दीवारें ३० फ़ीट गहरी और १५ फीट चौड़ी खाई से घिरी हुई थीं! पूर्व की ओर इसका प्रवेशद्वार था। वहाँ तक पहुंचने के लिये छः दरवाजों में से गुज़रना पड़ता था। शिवाजी ने इस क़िले की रक्षा का भार अपने पिता शहाजी के समय के अनुभवी सरदार फिरंगजी नरसाला को सौंपा हुआ था। उसे आज्ञा दी थी कि जब तक वह इस किले की रक्षा कर सके करे, जब बिल्कुल लाचारी की अवस्था हो और कुछ न हो सकता हो, आत्म-समर्पण करदे। इस समय शिवाजी बीजापुर दरबार की सेनाओं के साथ पन्हाला के किले में उलझे हुए थे। लगभग दो महीनों तक फिरंगजी ने जी-जान पर खेलकर किले की रक्षा की।

शायस्ताखाँ ने किले को जीतने के लिये अपनी सेना के चार भाग किए। चारों ओर से किले को घेर कर खाइयां खोदकर, किले की चारदीवारी तक पहुँचने के लिये सुरंग बनाने की योजना की गई। उचित स्थानों पर तोपों की तैनात करने के लिये ऊँचे प्लेटफार्म खड़े किये गये। दक्षिण के मुगलाई किलों से तोपें मंगाकर तैनात की गई। चौमासा बरसात की भारी बौछारों ने तोपों के स्थान बनाने तथा सुरंग बनाने में काफी दिक्कतें खड़ी कीं, और उधर किले के रक्षक मराठों ने गोलों की मार से मुगलसेना को काफी हैरान भी किया। परन्तु मुगलसेना गोलों और पानी की बौछार में आगे ही बढ़ती गई। ५४ दिनों की कोशिश के बाद उत्तर-पूर्व कोने के गुम्मद के नीचे सुरंग लगादी गई। १४ अगस्त १६६० ई० ३ बजे दोपहर इसमें विस्फोट किया गया। बुर्ज

और उसके रक्षक विस्फोट की आग से भस्मसात् हो गये। मुगलों ने आक्रमण किया। परन्तु दीवार के पीछे किले के रक्षक मराठों ने एक और दीवार खड़ी करली थी, और उसकी छाया में खड़े होकर इन्होंने मुगल सिपाहियों पर अस्त्रों, पत्थरों तथा आग के गोलों से हमला किया। मुगलों की आक्रमणकारी सेना को रुकना पड़ा। रात भर उसी रक्तरंजित भूमि में डटे रहे। १५ अगस्त की प्रातःकाल फिर आक्रमण शुरू किया। दीवार पर चढ़ गये। मुख्य किले को छीन लिया। अनेक रक्षकों को मौत के घाट उतारा। शेष सिपाहियों को किले में धकेल दिया। थोड़ी देर में किले के मराठा रक्षकों को मैदान छोड़ना पड़ा। किलेदार फिरंगजी वीरतापूर्वक एक-एक इंच भूमि के लिये लड़ा। आखिर सहायता न आने पर आत्मसमर्पण कर दिया। शायस्ताखाँ ने उसकी शूरवीरता से मुग्ध होकर उसे बादशाही सेना में निमन्त्रित किया। उसने ईमानदार स्वामिभक्त की भांति इस मांग को ठुकरा दिया। किला मुगलों के हाथ में आ गया था। फिरंगजी शेष बची हुई सेना के साथ शिवाजी के पास चला गया।

इस प्रकार दो सालों तक मुगल सेनापति शिवाजी के प्रदेशों में लूटमार मचाते रहे। मराठे सरदार भी मौका देखकर उन्हें परेशान करते। मार्च १६६३ में शिवाजी की घुड़सवार सेना के सेनापति नेताजी पालकर का पीछा किया गया। नेताजी ने अपने अश्वारोहियों के साथ मुगलाई सेना के शिविर पर आक्रमण किया था। मुगलाईसेना के ७००० घुड़-सवारों ने उसका पीछा किया। इससे बचने के लिये नेताजी पालकर को ५० मील प्रतिदिन की रफ्तार से भागदौड़ करनी पड़ी। मुगलाई सेना ने

बीजापुर से पाँच मील की दूरी तक उसका पीछा किया। रुस्तम-ज़मान ने मुगल सरदारों को आगे बढ़ने से रोका और कहा कि यह प्रदेश अजनबी सेना और सिपाहियों के लिये खतरनाक है, और स्वयं नेताजी पालकर का पीछा करने की प्रतिज्ञा की। नेताजी पालकर मुगलाई सेना के चंगुल से जख्मी होकर बच निकला। इस भागदौड़ में उसके ३०० घुड़सवार मारे गये।

मुग़लाई और बीजापुर सेनाओं द्वारा मराठा शक्ति तथा सेना के तितर-बितर होने पर भी, मराठा मण्डल विचलित नहीं हुआ। इन पराजयों ने मराठा वीरों को निराश और हताश करने के स्थान पर अधिक कर्मशील और उत्साही बना दिया। बाजीप्रभु के बलिदान ने, फिरंगजी की चाकण दुर्ग की रक्षा में प्रकट की गई अद्भुत वीरता ने, मराठा सरदारों तथा मराठा मंडल को जी-जान पर खेलने के लिये उतावला कर दिया। हर एक मराठा अपने आपको शत्रु को परेशान करने के लिये, भयंकर से भयंकर आपत्ति को निमन्त्रण देने में अपना अहोभाग्य समझने लगा। नेताजी पालकरने इसी धुन में इने-गिने घुड़सवारों के साथ मुगलाई सेना पर कई हमले किये और उन्हें परेशान किया। इन लड़ाइयों में शिवाजी के कई क़िले छिन गये थे। उत्तर-दक्षिण दोनों ओर से मुगलाई तथा बीजापुरी सेनाएँ शिवाजी पर आक्रमण कर रही थीं। ऐसे समय में शिवाजी ने अपने वीरों को रणचण्डी का संदेश सुनाने और विजेता शायस्ताखाँ को वीरता और चातुरी का पाठ पढ़ाने के लिये, रात को कड़े पहरे में पूना के शानदार महलों के शयनागार में प्रवेश करके उसे जगाया और युद्ध के लिये ललकारा।

शिवाजी शायस्ताखां के शयनागार में

चाकण किले को जीत कर शायस्ताखाँ पूना में चला गया। वहां उसने शिवाजी के बाल्यकाल के निवास-स्थान और क्रीड़ास्थान में डेरा लगाया। अपनी सेनाओं के घेरे में सपरिवार विजय-यात्रा के आमोद-प्रमोद की उमंगो को तृप्त करने के सब साधन जुटाए। इधर शिवाजी अपने घर में शत्रु को अधिष्ठित देखकर चैन से कैसे बैठ सकता था? परन्तु क्या करता? शायस्ताखां और यशवन्तसिंह की सम्मिलित सेनाओं का मुक़ाबला करने के लिये उसके पास साधन न थे। ऐसे समय शिवाजी ने 'आत्म-बलिदान' के अचूक ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करने का निश्चय किया। अपने आपको ख़तरे में डालने का निश्चय किया। अकेले ही रात को शायस्ताखाँ के शिविर में घुसकर उससे दो-दो हाथ करने का संकल्प किया।

शायस्ताखाँ सपरिवार पूना में शिवाजी के महलों में डेरा डाले हुए था। उसका परिवार तथा उसकी औरतें उसके साथ थीं। अन्तःपुर के चारों ओर रक्षकों, नौकरों और बाजा बजाने वालों के डेरे थे। कुछ दूरी पर, रास्ते के पार, सिंहगढ़ के दक्षिण की ओर राजा यशवन्तसिंह ने १०,००० सिपाहियों के साथ अपना शिविर तैनात किया हुआ था।

रमज़ान का महीना था। नवाब तथा उनके मुसलमान नौकर दिन के उपवास के बाद रात को भोजन करके गहरी नींद में सो गये थे। शिवाजी ने अपने साथ १,००० विश्वस्त सिपाही ले जाने के लिये चुने। मुग़ल शिविर से एक मील दूरी पर, मुग़ल सेना शिविर के दो पार्श्वों पर,

नेताजी पालकर और मोरोपन्त पेशवा के साथ १००-१०० सिपाहियों की दो टुकड़ियां तैनात की गईं। बाबाजी बापूजी और चिमणाजी बापूजी को शिवाजी ने अपना शरीर-रक्षक चुना। मराठी सेना ने नियत समय पर शिवाजी के नेतृत्व में सिंहगढ़ से कूच किया। दस मील का अन्तर दिन-दिन में ही तय किया गया। शिवाजी पूना में रात होते-होते पहुँच गया। ४०० चुने हुए सिपाहियों के साथ शिवाजी ने मुग़ल सेना शिविर की सीमा में प्रवेश किया। मुग़ल पहरेदारों के रोकने पर अपने आपको बादशाही सेना का दक्खिनी सिपाही बताकर अपने नियत स्थान पर जाने की सूचना दी। सैन्य शिविर के एक एकान्त कोने में कुछ घंटे आराम किया। मध्य रात में मराठा ढोली शायस्ताखाँ के निवास-स्थान के पास पहुंची। शिवाजी को पूना शहर के कोने-कोने का पता था। जिस मकान में शायस्ताखाँ सो रहा था उसमें शिवाजी ने बाल्य काल बिताया था। उसकी एक-एक ईंट का शिवाजी को ज्ञान था। रसोईघर में कुछ रसोइये आग जलाकर प्रातःकल के भोजन की तय्यारी कर रहे थे। इन्हें मराठा सिपाहियों ने चुपचाप यमलोक भेज दिया। रसोईघर और अन्तःपुर वाले कमरे की बीच की दीवार में एक छोटा-सा द्वार होता था। परन्तु शायस्ताखाँ ने अन्तःपुर को रसोईघर से पृथक करने के लिये ईंटों द्वारा इस दरवाजे को चुनवाकर बन्द कर दिया था। मराठा सिपाहियों ने इन ईंटों को धीरे-धीरे निकाल कर दरवाज़ा बनाना शुरू किया। हथौड़ों की चोटों और रसोईघर में आहत नौकरों की हाय-हाय ने कुछ नौकरों को जगा दिया। उन्होंने शायस्ताखाँ को आशंका की सूचना दी। ऐश व आराम की नींद में मस्त निश्चिन्त शायस्ताखाँ ने उनको डाँट कर नींद में खलल न

डालने की ताड़ना की। शीघ्र ही दरवाजे में एक आदमी के जाने का रास्ता निकल आया। शिवाजी चिमनाजी बापूजी के साथ सबसे पहले उस दरवाजे से अन्तःपुर में शायस्ताखाँ के शयनागार में प्रविष्ट हुए। २०० सिपाही भी उसके पीछे-पीछे अन्दर घुस गये।

यह स्थान कनातों से घिरा हुआ था। चादर की दीवारों के अन्दर, चादर की दीवारें थीं। पर्दे के घेरे के अन्दर पर्दे के गोलाकार कनात लगे हुए थे। शिवाजी तलवार से उन पर्दों को चीरते-फाड़ते शायस्ताखां के शयनागार में पहुँच गये। हनुमान रावण के शयनागार में पहुँच गया! भयभीत स्त्रियों ने नवाब को जगाया। शिवाजी ने शायस्ताखां को तलवार हाथ में लेने से पहले ही दबोच लिया और अपनी तलवार की चोट से उसके हाथ का अंगूठा काट दिया। इसी समय किसी चतुर स्त्री ने शयनागार में जलते हुए लैम्प गुल कर दिये जिससे कमरे में अन्धेरा छा गया। मराठा सिपाही अंधेरे में पानी के भरे बर्तनों से ठुकराकर गिर पड़े। दासियों ने मौक़ा देखकर शायस्ताखां को सुरक्षित स्थान में पहुँचा दिया। मराठा सिपाहियों ने मारकाट जारी रखी।

अन्तःपुर के बाहर २०० मराठे सिपाहियों ने सोते हुए पहरेदारों को क़तल कर उन्हें इस प्रकार असावधानी से, पहरा देने की सज़ा दी और शायस्ताखां के नाम से बाजे वालों को बैण्ड बजाने का हुक्म दिया। बैण्ड की आवाज़ ने जख्मी लोगों की चीख पुकार और मरते हुए शत्रु सिपाहियों की आहों को गुम कर दिया। सब तरफ़ गड़बड़, और परेशानी ही परेशानी दिखाई देने लगी। अन्तःपुर का शोरगुल, क्षण-क्षण में भयंकर होता गया। कुछ समय बाद मुग़ल सेना को पता

चला कि उसके सेनापति पर शत्रुओं ने हमला कर दिया है। शायस्ताखां का बेटा अब्बुलफतह सिपाहियों के साथ अपने पिता की रक्षा के लिये घटनास्थल पर पहुँचा। यह वीर युवक कुछ समय तक मराठे सिपाहियों से जूझता रहा। एक दो मराठे सिपाहियों को तलवार के घाट उतारा। आखिर जख्मी होकर धराशायी हुआ। एक और मुग़ल सर्दार ने अन्तः-पुर का दरवाज़ा बन्द पाया। रस्सी की सीढ़ी से ऊपर चढ़ कर अन्दर जाने की कोशिश की, नीचे उतरा भी परन्तु वह एकदम मराठा सिपा-हियों की तलवारों का निशाना बन मौत का अतिथि बना।

शिवाजी ने देखा कि शत्रु जाग गया है, और सावधान हो गया है। शिवाजी झटपट अपने साथियों के साथ एक छोटे सीधे रास्ते से मुग़ल शिविर से बाहर निकल गये। मुग़ल सिपाही उनको इधर उधर तलाश करने में लग गये। शिवाजी शिविर से बाहर सुरक्षित निकल गये! मुग़ल सेना उनका पीछा न कर सकी!

यह घटना १६६३ ई० की ५ अप्रैल की रात को हुई थी। ६ अप्रैल को प्रातःकाल दरबारी लोग रात की मुसीबत के सम्बन्ध में शोक और सहानुभूति प्रकट करने के लिये शायस्ताखां के शिविर में आए। महा-राजा यशवन्तसिंह भी आए। शायस्ताखां ने कटाक्ष के साथ उन्हें देखते ही कहा कि 'अच्छा तुम अभी जीवित हो? मैंने तो यह समझा था कि तुम शिवाजी को रोकते रोकते मर चुके होगे"। शायस्ताखां के शिविर में निराशा और मातम छा गया। उसका अपना हृदय दिन-प्रतिदिन इस पराजय से बुझने लगा। आत्म-रक्षा के विचार से शायस्ताखां औरंगाबाद को चला गया। बादशाह ने जब इस घटना का वृत्तान्त सुना तो उसने शायस्ताखां की इस नालायकी और असावधानी पर क्रोध

प्रकट किया और उसे बंगाल की तरफ़ सूबेदार बना कर भेज दिया। औरंगजेब के शब्दों में बंगाल उन दिनों 'काला पानी' था। शायस्ताखां को बादशाह से मिलने का भी अवसर न दिया गया। जनवरी १६६४ को शायस्ताखां दक्षिण का शासन-भार शाहज़ादा मुअज़्ज़म को देकर वहां से विदा हुआ।

× × × ×

सूरत में शिवाजी पर खूनी वार

सूरत शहर उस समय के समृद्ध सम्पत्तिशाली शहरों में प्रमुख शहर था। मुग़ल बादशाहों के समुद्र द्वारा होने वाले विदेशी व्यापार का मुख्य केन्द्र था। इसी शहर से होकर मुसलमान हाजी (अरब की हज) यात्रा करने जाते थे। अभी इधर दक्षिण भारत के मुग़ल शासकों में परिवर्तन हो रहे थे, कि उधर शिवाजी ने सूरत पर हमला कर दिया। वहां से लगभग दो करोड़ की सम्पत्ति लूटी। सूरत शहर के गवर्नर इनायतखां ने शिवाजी के आक्रमण करने की बात सुनते ही शहर को असुरक्षित दशा में छोड़ कर सूरत के क़िले में शरण ली। शिवाजी की सेना ने शहर को दिल खोल कर लूटा। लूटने से पहले शिवाजी ने ६ जनवरी, १६६४ ई० को दूतों द्वारा शहर के गवर्नर और शहर के मुख्य व्यापारियों, हाजी सैय्यद बेग और बहराजी वोहरा और हाजी क़ासिम को सुलह की शर्तों के लिये बुला भेजा। परन्तु कोई उत्तर नहीं आया। चार दिन तक खूब लूटमार मची। शिवाजी ने अपने कुछेक सिपाहियों को सूरत के क़िले के संरक्षकों के साथ लड़ाई में जुटा दिया। बहराजी वोहरा और हाजी सैयद बेग के महलों को लूट कर जला दिया गया। शिवाजी ने स्पष्ट घोषणा की कि मैं औरंगजेब द्वारा मराठा प्रदेश पर किये गये आक्रमण का बदला लेने के लिये ही आया

हूँ। मेरा सूरत के व्यापारियों से कोई झगड़ा नहीं। इस लूट में डच, अंग्रेज़, पुर्तगीज़, टर्किश और आर्मीनियन लोगों ने स्वयं आत्मरक्षा की।

इन्होंने शिवाजी के रास्ते में किसी प्रकार की रुकावट खड़ी नहीं की परन्तु आत्मरक्षा के लिये उचित उपाय किये। सूरत शहर का शासक इनायतखां प्रत्यक्ष मुक़ाबले में शिवाजी के सामने न आ सका। उसने एक नौजवान दूत को शिवाजी के पास सुलह की शर्तों के लिये भेजा। शिवाजी ने कहा कि मैं तुम्हारे शासक की भांति छिप कर लड़ने वाला 'औरत' नहीं हूं। नौजवान ने एकदम उत्तर दिया कि हम औरत नहीं हैं और तुम्हारे लिये हमारे पास और भी संदेश हैं। यह कहते-कहते छिपी हुई खंजर निकाल कर शिवाजी पर हमला कर दिया। शिवाजी के पास खड़े शरीर-रक्षक ने तलवार के एक वार से घातक का हाथ काट गिराया। वह युवक हाथ कटने पर भी न रुका। उसने शिवाजी पर हमला किया। दोनों लड़ते लड़ते भूमि पर लोटपोट होने लगे। शिवाजी के कपड़ों पर रक्त के छींटे देख कर उनके अनुयाइयों ने समझा कि शिवाजी मारे गये हैं। यह बात सुनते ही मराठा अफ़सरों ने शत्रु-क़ैदियों की हत्या करने का फौजी हुक्म दे दिया। इतने में शिवाजी के शरीर-रक्षक ने घातक युवक का सिर धड़ से अलग कर दिया। शिवाजी सुरक्षित रूप में सिपाहियों के सामने उपस्थित हुए और तत्काल क़ैदियों की हत्या की मनाही की। इतने में मुग़ल सेना के आने की ख़बर मिली। शिवाजी १० जनवरी की प्रातःकाल वहाँ से लूट का सामान लेकर विदा हो गये और कोंकण में जाकर रुके। १७ जनवरी को शाही फौज वहाँ आई। बादशाह ने राज-कर में कमी करके पीड़ित व्यापारियों के साथ सहानुभूति प्रकट की और अनेक डच व्यापारियों को, उनके शिवाजी के साथ न मिलने तथा सूरत के व्यापारियों की सहायता करने के उपलक्ष में आयात माल पर 'कर' की मात्रा भी कम कर दी।

शिवराम
(मद्रास)

७

मिर्ज़ा जयसिंह और शिवाजी

शिवाजी की गति को रोकने के लिये, बीजापुर दरबार और मुग़ल-दरबार ने अफ़ज़लखां और शायस्ताखां भेजे। उनके साथ मराठे सरदार और राजपूत सरदार भी सहायक के रूप में भेजे थे। परन्तु कोई भी शिवाजी की गति को न रोक सका। शिवाजी आकाश में उड़ते थे। एकदम देखते-देखते पहाड़ियों, घाटियों की गहराइयों मैं छुप जाते थे। पता नहीं कब कहां से आ चमकते थे। अंग्रेज़, डच, आर्मीनियन उनकी स्फूर्ति, चतुरता, वीरता और फुर्तीलेपन से परेशान थे। वह उन्हें भूत-प्रेतों का अधिनायक, मौत का पैगाम समझते थे। उस समय के बादशाह उनके नाम से, उनके घुड़सवार सिपाहियों की टापों से, थर थर काँपते थे। कई बार यम के द्वार से उन्हें सही-सलामत वापस आया देख कर उस समय की जनता उन्हें अमर एवं अजेय समझने लगी थी। उनके साहस तथा निडर व्यवहार से मौत भी उनकी चेरी बन गई थी। भयंकर से भयंकर मुसीबत में भी मृत्यु जैसे उनको अपने वरदान से सुरक्षित रखती थी।

औरंगजेब हैरान था और परेशान था। वह दिन-प्रतिदिन शिवाजी के बढ़ते प्रभाव को कम करने के लिये कोशिश करता था परन्तु जितनी वह कोशिश करता उतना ही शिवाजी का प्रभाव और उनकी गति प्रबल होती जाती थी। औरंगजेब के दरबार में

महाराज जयसिंह अपनी वीरता, दूरदर्शिता और नीति-कुशलता के लिये प्रसिद्ध था। उसने मुग़ल दरबार में रहते हुए मुगलों की सभ्यता को, भाषा तथा साहित्य को इस तल्लीनता से अपनाया था कि इसे मिर्ज़ा जयसिंह के नाम से स्मरण किया जाता था। औरंगजेब जसवन्तसिंह से निराश हो ही चुका था। अब उसने मुअज्जम को दक्खिन का शासक बनाकर मिर्जा जयसिंह के साथ शिवाजी को कैद करने के लिये भेजा। जयसिंह भारी सेना तथा विस्तृत अधिकारों के साथ दक्षिण में आया। उसने आते ही सेना-संचालन इस ढंग से करने का निश्चय किया जिससे बीजापुर दरबार और शिवाजी दोनों पर उसकी आंख रहे। दोनों आपस में मिल न सकें। शिवाजी ने जयसिंह से मुलाक़ात करने के लिये कई यत्न किये। जयसिंह ने एक न सुनी। एक के बाद एक करके शिवाजी के जीते हुए प्रदेशों को अधीन करने का क्रम जारी किया।

यह परिस्थिति देखकर शिवाजी ने मिर्जा जयसिंह को एक पत्र भेजा जिसमें हिन्दू-राष्ट्र की तत्कालीन अवस्था का सजीव चित्र खींचकर, उन्हें मातृ-भूमि के हित के लिये मुग़लों की गुलामी और देशद्रोह छोड़ने की प्रेरणा की। यह पत्र शिवाजी की राजनीतिज्ञता का आदर्श है, जिसमें उन्होंने राजनीति के सभी अंगों--साम, दाम, दण्ड और भेद—का पूरा उपयोग किया है।

शिवाजी का पत्र जयसिंह के नाम

सरे सर्वराँ राजए राजगाँ। चमनबंद बुस्ताने हिंदोसताँ ॥

ऐ सर्दारों के सर्दार, राजाओं के राजा [तथा] भारतोद्यान की क्यारियों के व्यवस्थापक !

जिगर बद फ़र्ज़ानए रामचंद। ज़े तो गर्दने राजपूतां बुलंद ॥

ए रामचन्द्र के चैतन्य हृदयांश, तुझसे राजपूतों की ग्रीवा उन्नत है ॥

क़वीतर्ज़ तो दौलते बाबरी। ज़े बख्ते हुमायूँ तुरा याबरी ॥

तुझ से बाबरवंश की राज्यलक्ष्मी अधिक प्रबल हो रही है (तथा) शुभ भाग्य से तुझ से सहायता (मिलती) हैं।

जवाँ बख्त ज़ैशाह बा राय पीर। ज़े सेवा सलामो दरूदे पिज़ीर ॥

ए जवान (प्रबल) भाग्य [तथा] वृद्ध (प्रौढ़) बुद्धि वाले जयशाह, सेवा (अर्थात् शिवा) का प्रणाम तथा आशिष स्वीकार कर।

जहाँ आफ़रीनत् निगाहदार बाद। तुरा रहनुमायद सुए दीनो ताद ॥

जगत् का जनक तेरा रक्षक हो (तथा) तुझ को धर्म एवं न्याय का मार्ग दिखावे।

शनीदम कि बर क़स्दे मन् आमदी। बफ़तहे दयारे दकिन आमदी ॥

मैंने सुना है कि तू मुझ पर आक्रमण करने (एवं) दक्षिण प्रांत को विजय करने आया है।

जे खूने दिलो दीदय हिंदुआँ। तु ख्वाही शवी सुर्ख़रू दर जहाँ ॥

हिंदुओं के हृदय तथा आँखों के रक्त से तू संसार में लाल मुँहवाला (यशस्वी) हुआ चाहता है।

न दानी मगर कीं सियाही शवद। कज़ीं मुल्को दीं रा तबाही शवद ॥

पर तू यह नहीं जानता कि यह (तेरे मुंह पर) कालख लग रही है क्योंकि इससे देश तथा धर्म को आपत्ति हो रही है।

अगर सर दमेदरगरेबाँ क़नी। चु नज़्ज़ारए दस्तो दामाँ कुनी ॥

यदि तू क्षणमात्र गरेबान में मुंह डाले (अपने विषय में विचार करे) और यदि तू अपने हाथ और दामन पर (विवेक) दृष्टि डाले।

बबीनी कि ईं रंग अज़ खून कीस्त। दर दो जहां रंग ईं रंग चीस्त।

तो तू देखे कि यह रंग किसके खून का है और इस रंग का (वास्तविक) रंग दोनों लोकों में क्या है [लाल या काला ?]।

तु खुद आमदी गर बफ़तहे दकिन। शुदे फ़र्शे राहत सरो चश्मे मन॥

यदि तू स्वयं [अपनी ओर से] दक्षिण विजय करने आता (तो) मेरे सिर और आंख तेरे रास्ते में बिछ जाते।

शुतम हमरकाबत् ब फौजे गराँ। सुपुर्दम बतो अज़ कराँ ता कराँ॥

मैं तेरे घोड़े के साथ बड़ी सेना लेकर चलता [और] एक सिरे से दूसरे सिरे तक (भूमि) तुझे सौंप देता (विजय करा देता).।

वले तू ज़ औरंगजेब आमदी। बाइग़ूबाय ज़ाहिद फ़रेब आमदी॥

पर तू तो औरंजेब की ओर से (उस) भद्रजनों के धोखा देने वाले के बहकाने में पड़ कर आया है।

नादानम् कुनूँ चूँ बबाज़म् बतो। न मर्दी बुबद् गर बसाज़म बतो॥

अब मैं नहीं जानता कि तेरे साथ कौन खेल खेलूँ। [अब] यदि मैं तुझ से मिल जाऊँ तो यह मर्दानगी (पुरुषत्व) नहीं है।

कि मर्दां न दौराँ निवाज़ी कुनुद्। हिज़ब्रां न ख्वाहबाज़ी कुनुद्॥

क्योंकि पुरुष लोग समय की सेवा नहीं करते। सिंह लोमड़ी-पना नहीं करते।

वगर चारः साजम बतेग़ो तबर। दो जानिब रसद हिंदुओं राज़रर॥

और अगर तलवार तथा कुठार से काम लेता हूँ तो दोनों ओर हिंदुओं को ही हानि पहुंचती है।

दरेग़ा कि तेग़म जेहद अज़ मियाँ। जुज़ अज़बहें खूँ खुर्दने......॥

बड़ा खेद तो यह है कि............खून के अतिरिक्त किसी अन्य

कार्य के निमित्त मेरे तलवार को मियान से निकलना पड़े।

चु तुर्कां बदीं कारज़ार आमदे। बरे शेर वर्दां शिकार आमदे॥

यदि इस लड़ाई के लिये तुर्क आए होते तो (हम) शेरमर्दों के निमित्त (घर बैठे) शिकार आए होते।

वले आं सियहकारे बेदादो दीं। कि देवस्त दर सूरते आदमीं॥

पर वह न्याय तथा धर्म से वंचित पापी जो कि मनुष्य के रूप में राक्षस है,

चु फ़ज़्ले जे अफ़ज़ल नयामद पदीद। ना शाइस्तकारी जे शाइस्तःदीद।

अफ़ज़ल खाँ से कोई श्रेष्ठता न प्रकट हुई [और] शाइस्ताखाँ की कोई योग्यता न देखी।

तुरा बरगुमारद पए जंगे मा। कि दारद न .खुद ताबे आहंगे मा॥

(तो) तुझ को हमारे युद्ध के निमित्त नियत करता है क्योंकि वह स्वयं तो हमारे आक्रमण के सहने की योग्यता रखता नहीं।

बख्वाहद कि अज़ ज़म्रए हिंदुआँ। न मानद क़वीपंजए दर जहाँ॥

(वह) चाहता है कि हिंदुओं के दल में कोई बलशाली संसार में न रह जाए।

बहम कुश्तःओ खस्तः शेरां शवँद। शिगलाँ हिज़ब्रे नायस्ताँ शवँद॥

सिंहगण आपस ही में (लड़भिड़ कर) घायल तथा श्रांत हो जायँ जिससे कि गीदड़ जंगल के सिंह बन बैठें।

ड ईं राज़ चूँ दर सर आयद तुरा। फ़सूनश मगर बर गियायद तुरा॥

यह गुप्त भेद तेरे दिमाग़ में क्यों बैठता? प्रतीत होता है कि उस का जादू तुझे बहकाए रहता है।

बसे नेको बद दर जहाँ दीदई। गुलोखार अज़ बोस्ताँ चीदई॥

तूने संसार में बहुत भला बुरा देखा हे। उद्यान से तूने फूल और कांटे दोनों संचित किये हैं।

न बायद कि बामा नबर्द आवरी। सरे हिंदुआं जेरे गर्द आवरी॥

यह नहीं चाहिये कि तू हम लोगों से युद्ध करे (और) हिंदुओं के सिरों को धूल में मिलावे।

बदीं पुख्तःकारी जवानी मकुन। जे सादी मगर यादगीर ई सखून॥

ऐसी परिपक्व कर्मण्यता (प्राप्त होने) पर भी जवानी (यौवनोचित कार्य) मत कर, प्रत्युत सॉंदी के इस कथन को स्मरण कर–

न हरजा मुरक्कब तवाँ ताख़तन। कि जाहा सिपर बायर अंदाखतन॥

"सब स्थानों पर घोड़ा नहीं दौड़ाया जाता। कहीं कहीं ढ़ाल भी फैंक कर भागना उचित होता है।

पलंगाँ बगौराँ पलंगी कुनंद। न बाजैगमां खानःजंगी कुनंद॥

व्याघ्र मृगादि पर व्याघ्रता करते हैं। सिंहों के साथ गृह-युद्ध में प्रवृत्त नहीं होते।

चु आबस्त दर तेग़े बुर्राने तो। चु ताबस्त दर अस्पे जौलाने तो॥

यदि तेरी काटने वाली तलवार में पानी है; यदि तेरे कूदने वाले घोड़े में दम है,

ब बायद् क़ि बर दुश्मने दी ज़र्नी। बुनो बेखे रा बरकनी॥

(तो) तुझको चाहिये कि धर्म के शत्रु पर आक्रमण करे (एवं) उसकी जड़ मूल खोद डाले।

अगर दावरे मुल्क दारा बुदे। बमी नीज़ लुत्फो मदारा बुदे॥

अगर देश का राजा दाराशिकोह होता तो हम लोगों के साथ भी कृपा तथा अनुग्रह के बर्ताव होते।

बले तूने जसवंत दादी फ़रेब। ब दिल दर न कर्दी ज़राज़ो नशेब॥

पर तूने जसवंतसिंह को धोखा दिया (तथा) हृदय में ऊँच नीच नहीं सोचा ।

ज़ेरूबाहबाज़ी ने सेर आमदी । बजंगे हिज़ब्राँ दिलेर आमदी ॥

तू लोमड़ी का खेल खेलकर अभी अघाया नहीं है (और) सिंहों से युद्ध के निमित्त ढिठाई करके आया है ।

अज़ीं तुर्कदाज़ी चे आयद तुरा । हवायत सुराबे नुमायद तुरा ॥

तुझको इस दौड़-धूप से क्या मिलता है, तेरी तृष्णा तुझे मृग-तृष्णा दिखलाती है ।

बदाँ सिफ्लःमानी कि जेहदे वरद । उरू से बचंगाल खेस आवरद ॥

तू उस तुच्छ व्यक्ति के सदृश है जो कि बहुत श्रम करता है (और) किसी सुन्दरी को अपने हाथ में लाता है ।

वले बर न अज़ बागे हुस्नश खुरद । बदस्ते हरीफ़ वरा बसपुरद ॥

पर उसकी सौंदर्य-वाटिका का फल स्वयं नहीं खाता (प्रत्युत) उसको अपने प्रतिद्वंदी के हाथ में सौंप देता है ।

चि नाज़ी तु बर मेहने आ नाबकार । बदानी सरंजामे कारे जुझार ॥

तू उस नीच की कृपा पर क्या अभिमान करता है ? तू जुझारसिंह के काम का परिणाम जानता है ।

बदानी कि बर बच्चए छत्रसाल । चेसाँ ख्वासस्त ओ ता रसानद ज़वाल ॥

तू जानता है कुमार छत्रसाल पर वह किस प्रकार से आपत्ति पहुंचाता था ।

बदानी कि बर हिंदु आने दिगर । नयामद चे अज़ दस्ते आँ कीनःवर ॥

तू जानता है कि दूसरे हिंदुओं पर भी उस दुष्ट के हाथ से क्या क्या विपत्तियां नहीं आईं ।

गिरफ्तम् कि पैवंद बस्ती दी । तु नामूस रा शिकस्ती बदो ॥

मैंने मान लिया कि तूने उससे सम्बन्ध जोड़ लिया है और कुल की मर्यादा उसके सिर तोड़ी है।

बराँ देव दामे अज़ीं रिश्तः चीस्त। कि महकम तर अज़ बंदे शल्वार नीस्त॥

(पर) उस राक्षस के निमित्त इस बन्धन का जाल क्या वस्तु है क्योंकि यह बन्धन तो इजारबन्द से अधिक दृढ़ नहीं है।

पए कामे खुद ऊन दादर हज़र। ज़े खूने निरादर ज़े जाने पिदर॥

वह तो अपने इष्ट साधन के निमित्त भाई के रक्त (तथा) बाप के प्राण लेने से भी नहीं डरता।

ज़े पासे वफ़ा गर बदानी सखुन। चि कर्दी बशाहेजहां याद कुन॥

यदि तू राजभक्ति की दुहाई दे तो तू यह स्मरण कर कि तूने शाहजहाँ के साथ क्या बर्ताव किया।

अगर बहरःदारी ज़े फ़र्ज़ानगी। जनी लाफ़े मर्दी ओ मर्दानगी॥

यदि तुझको विधाता के यहां से बुद्धि का कुछ भाग मिला है (और) तू पौरुष तथा पुरुषत्व की बड़ मारता है।

ज़े सोज़े वतन तेग़ रा ताबू देह। ज़े अश्के सितम दीदःगाँ आब देह॥

तो तू अपनी जन्मभूमि के संताप से तलवार को तपावे (तथा) अत्याचार से दुखियों के आंसू से (उस पर) पानी दे।

न मारा बहम् वक़्ते पैकार हस्त। कि बर हिंदुओं कार दुश्वार हस्त॥

यह अवसर हम लोगों के आपस में लड़ने का नहीं है क्योंकि हिन्दुओं पर (इस समय) बड़ा कठिन कार्य पड़ा है।

ज़नो बच्चओ मुल्को इमला के मा। बुतो माबिदो आबिदे पाके मा॥

हमारे लड़के-बाले, देश, धन, देव, देवालय तथा पवित्र देवपूजक—

हमः रा तबाहीस्स्त अज़ कारे ऊ। बजाए रसीदस्त आ ज़ारे ऊ॥

इन सब पर उसके काम से आपत्ति पड़ रही है। (तथा) उसका दुःख सीमा तक पहुंच गया है,

कि चंदे चुकारश बमानद चुनीं। निशाने न मानद जे मा बर जमीं॥

कि यदि कुछ दिन तक उसका काम ऐसा ही चलता रहा (तो) हम लोगों का कोई चिह्न (भी) पृथिवी पर न रह जायगा।

तअज्जुब कि इक दस्तए मुगलाँ। बरीं पहन मुल्कम् शवद हुक्मरां॥

बड़े आश्चर्य की बात है कि एक मुट्ठी भर मुगल हमारे (इतने) बड़े देश पर प्रभुता जमावें।

न ईं चीरःदस्ती ज़े मर्दानगीस्त। बबीं गर तुरा चुश्मे फ़र्ज़ानगीस्त॥

यह प्रबलता (कुछ) पुरुषार्थ के कारण नहीं है। यदि तुझको समझ की आंख है तो देख,

चसां ऊ बमा मोहःबाज़ी कुनद। चसां बर रुख्श रंगसाज़ी कुनद॥

(कि) वह हमारे साथ कैसी गोढियाचाली करता है और अपने मुंह पर कैसा-कैसा रग रंगता है।

कशद् पान मारा ब जंजीरेमा। बदुर्रद् सरेमा ब शमशीरे मा॥

हमारे पावों को हमारी ही साँकलों में जकड़ देता है (तथा) हमारे सिरों को हमारी ही तलवारों से काढता है।

मरा जहद बावद करावाँ नमुद। पए हिंदुओ हिंदो दीने हुनूद॥

हम लोगोंको (इस समय) हिंदू, हिन्दूस्तान तथा हिंदू धर्म (की रक्षा) के निमित्त बहुत अधिक यत्न करना चाहिये।

बनायद कि कोशेमो राये ज़नेम। पए मुल्के खुद दस्तों पाये ज़नेम॥

हमको चाहिये कि यत्न करें और कोई राय स्थिर करें (तथा) अपने देश के लिये खूब हाथ पांव मारें।

ब शमशीरो तदबीर आबे दहेम। बतुर्की व तुर्की जवाब दहेम॥

तलवार पर और तदबीर पर पानी दें (अर्थात् उन्हे चमकावें

ओर] तुर्कों को जवाब तुर्की में (जैसे का तैसा) दें।

व जसवंत गर तू मुवाफ़िक़ शवी । ब दिल दर्पए ऑ मुनाफ़िक़ शवी ॥

यदि तू जसवंतसिंह से मिल जाय और हृदय से उस कपट-कलेवर के पैंड़े पड़ जाय,

ब राना दमी हमदमे हमदमी । बे बायद कि कारे बर आयद हमी ॥

[तथा] राना से भी तू एकता का व्यवहार कर ले, तो आशा है कि बड़ा काम निकल जाय।

जे हर्सू बता जेदो जंग आवरेद । सरे माररा जेरे संग आवरेद ॥

चारों तरफ़ से धावा करके तुम लोग युद्ध करो। उस साँप के सिर को पत्थर के नीचे दबा लो (कुचल डालो)।

क चंदे ब पेचद वर अंजामे ख़ेश । नेयारद बमुल्के दकिन दाम खेश ॥

ताकि कुछ दिनों तक वह अपने ही परिणाम के सोच में पड़ा रहे [और] दक्षिण प्रांत की ओर अपना जाल न फैलावे।

मन ईं सू मर्दाने नेजःगुज़ार । अज़ी हर दोशाहाँ बर आराम दमार ॥

[और] मैं इस ओर भाला चलाने वाले वीरों के साथ इन दोनों बादशाहों का भेजा निकाल लूं।

ब अफ़वाजे गुर्रिदा मानिंदे मेग़ । बेबारम अबर दुश्मनां आबे तेग़ ॥

मेघों की भांति गरजने वाली सेना से दुश्मनों पर तलवार का पानी बरसाऊँ।

ब शोयम् जेदुश्मना नामो निशाँ । जे लौहे दकिन अज़करा़ँ ताकराँ ॥

दक्षिण देश के पटल पर से, एक सिरे से दूसरे सिरे तक दुश्मनों का नाम तथा चिह्न धो डालूं।

अज़ां पस् ब मर्दाने पैमूदःकार । बजंगी सवाराने नेजःगुजार ॥

इसके पश्चात् कार्यदक्ष शूरों तथा भाला चलाने वाले सरदारों के साथ,

चु दरियाय पुर् शोरिशो मौजज़न । बर आयम ब मैदाँ जे कोहे दकिन ॥

लहरें लेती हुई तथा कोलाहल मचाती हुई नदी की भाँति दक्षिण के पहाड़ों से निकल कर मैदान में आऊँ,

शवम ज़दतरे हमरकाबे शुमा । अज़ो बाज़ पुरुम हिसाबे शुमा ॥

और अत्यंत शीघ्र तुम लोगों की सेवा में उपस्थित होऊं और फिर उससे तुम लोगों का हिसाब पूछूँ ।

जे हर चार सू सख्त जंग आवरेम । बरो अर्सए जंग तंग आवरेम ॥

[फिर हम लोग] चारों ओर से घोर युद्ध उपस्थित करें और लड़ाई का मैदान उस के निमित्त संकीर्ण कर दें।

बदेहली रसानेम अफ़वाजरा । बदाँ खानाए खस्तः अमवाजारा ॥

हम लोग अपनी सेनाओं की तरंगों को दिल्ली में, उस जर्जरीभूत घर में, पहुँचा दें ।

जे नामश् न औरंग मानद न जेब । न तेग़े तअद्दीन न दामे फरेब ॥

उसके नाम में से न तो औरंग (राजसिंहासन) रह जाय और न ज़ेब (शोभा) रहे; न उसकी अत्याचार की तलवार [रह जाय] न कपट का जाल ।

बरारेम जूए पर अज़ खूने नाब । बरूहे बुजुर्गां रसानेम आब ॥

हम लोग शुद्ध रक्त से भरी हुई एक नदी बहा दें [और उससे] अपने पितरों की आत्माओं का तर्पण करें ।

बनेंरूए दादारे जाँ आफ़रीं । बसाज़म जायश बजेरे ज़मीं ॥

न्यायपरायण, प्राणों के उत्पन्न करने वाले (ईश्वर) की सहायता से हम लोग उसका स्थान पृथ्वी के नीचे (कब्र में) बना दें ।

न ईं कार बिसियार दुशवार हस्त । दिलो दीदओ दस्त दर्कार हस्त ॥

यह काम [कुछ] बहुत कठिन नहीं है । (केवल यथोचित) हृदय, आँख तथा हाथ की आवश्यकता है ।

दो दिल यक शवद् बेशकुन्द् कोहरा । परागंदगी आरद् अंबोहरा ॥

दो हृदय (यदि)एक हो जायँ तो पहाड़ को तोड़ सकते हैं (तथा) समूह के समूह को तितर-बितर कर सकते हैं ॥

अज़ी दर् मरा गुफ्तनीहा बसेस्त । कि दर नामः आवुर्दनश राय नेस्त ॥

इस विषय में मुझको तुझसे बहुत कुछ कहना (सुनना) है, जिस का पत्र में लाना (लिखना) [युक्ति] सम्मत नहीं है ॥

बख्वाहम कि रानेम बाहम सखुन । ने यारेम बे सूद रंजो मेहन ।

मैं चाहता हूँ कि हम लोग परस्पर बातचीत कर लें जिसमें कि व्यर्थ दुःख तथा श्रम न झेलें ।

चु ख्वाही बे आयम वदीदारे तो । बगोश आवरम राजे गुफ्तारे तो ॥

यदि तू चाहे तो मैं तुझ से साक्षात् करने आऊँ । (और) तेरी बातों का भेद श्रवणगोचर करूँ ।

बखल्वत कुशायेम रूए सखुन । कुशम शानः बर पेचे मूए सखुन ॥

हम लोग बातरूपी सुन्दरी का मुख एकांत में खोलें । (और) मैं उसके बालों के उलझन पर कंघी फेरूं ।

वे दामाने तदबीर दस्त आवरेम । .फ़ुसूने बरा़ँ देव मस्त आवरेम ॥

यत्न के दामन पर हाथ धरें । (और) उस उन्मत्त राक्षस पर कोई मन्त्र चलावें ।

तराजे त राहे सुए काने ख्वेश । फराजेम दर दो हाँ नाभे ख्वेश ॥

अपने कार्य (सिद्धि) की ओर का कोई रास्ता निकालें (और) दोनों लोकों (इहलोक तथा परलोक) में अपना नाम ऊँचा करें ।

बतेग़ो वअस्पो बमुल्को बदी । कि हर्गिज़ गर्जदन न आयद अज़ीं ॥

तलवार की शपथ, घोड़े की शपथ, देश की शपथ तथा धर्म की शपथ करता हूँ कि इससे तुझ पर कदापि (कोई) आपत्ति नहीं आवेगी ।

जे अञ्जामे अफ़ज़ल मशौ बद्गुमाँ। कि ओरा न बुद रास्ती दरमियाँ॥

अफ़ज़लखां के परिणाम से तू शङ्कित मत हो क्योंकि उसमें सचाई नहीं थी।

जे जंगी सवाराने परखाशजू। हज़ारो दो सद दर कमीं दाश्त ऊ॥

बारह सौ बड़े लड़ाके हब्शी सवार वह मेरे लिये घात में लगाए हुए था।

अगर पेश दस्तीं न कर्दम वरो। कि ईं नामः अकनूँ नविश्ते बतो॥

यदि मैं पहिले ही उसपर हाथ न फेरता तो इस समय यह पत्र तुझ को कौन लिखता?

मर बातो चश्मे चुनीं कार नेस्त। तुरा खुद बमन नीज़ पैकार नेस्त॥

(पर) मुझको तुझ से ऐसे काम की आशा नहीं है (क्योंकि) तुझको भी स्वयं मुझसे कोई शत्रुता नही है॥

जवाबत बयाबम् अगर वाशबाच। शब आयम् बपेशे दो तनहा शिताब॥

यदि मैं तेरा उत्तर यथेष्ट पाऊँ तो, तेरे समक्ष रात्रि को अकेला आऊं।

नुमायम बतो नामःहाय निहाँ। कि बगिरफ्तम अज जेबे शायस्तःखां॥

मैं तुझको वे गुप्त पत्र दिखाऊं जो कि मैंने शाइस्ताखां की जेब से निकाल लिये थे।

ज़नम आवे अंदेशः बर दीदःअत। कुनम् दूर ख्वाबे पसंदीदः अत॥

तेरी आँखों पर मैं संशय का जल छिड़कूं (और) तेरी सुखनिद्रा को दूर करूँ।

कुनम् रास्त् ताबीर ख्वावे तुरा। वज़ां पस बगौरम् जवावे तुरा॥

तेरे स्वप्न का सच्चा-सच्चा फलादेश कहूं (और) उसके पश्चात् तेरा जवाब लूं।

नयाबद चुईं नामःइमज़ाजे तो। मनो तेग़ बुर्रानो अफ़वाजे तो ॥

यदि यह पत्र तेरे मन के अनुकूल न पड़े (तो फिर) मैं हूँ और काटने वाली तलवार तथा तेरी सेना।

चु ख़ुर्शेद फ़र्दा कशद रूब्रशाम्। हिलालम् नेयाम अफ़नगद वत्सलाम ॥

कल जिस समय सूर्य अपना मुंह संध्या में छिपा लेगा, उस समय मेरा अर्धचन्द्र (खड्ग) मियान को फेंक देगा (मियान से निकल आवेगा)। बस, भला हो।

\+ \+ \+ \+

मिर्ज़ा राजा जयसिंह ने शशवाद में मुख्य शिविर कायम किया। शिवाजी से असन्तुष्ट हुए मराठे सरदारों को अपने साथ मिलाया। धन, राज और सम्मान के प्रलोभनों द्वारा अनेक मराठा सरदारों को अपनी ओर किया। इधर शिवाजी भी यथाशक्ति मुगल सेनाओं पर अचानक आक्रमण कर उन्हें भयभीत करने का यत्न करने लगे। परन्तु जयसिंह ने अपनी सेनाओं का संचालन इस ढंग से किया कि शिवाजी की ये चालें उसकी सेनाओं की गति को न रोक सकीं। आख़िर, पुरंदर के किले पर दोनों की मुठभेड़ हुई। पुरंदर के किले तक पहुँचने के लिये वज्रगढ़ का किला भी जीत लिया गया। तदनन्तर जयसिंह ने पुरंदर का किला जीतने के लिये उसके सामने तोपें तैनात कीं। पुरंदर के किले में २००० मराठा सिपाही थे। जयसिंह ने दिलेरखान के अधीन सेनाएँ भेजकर पुरंदर को घेर लिया। २००० मराठा सिपाही कई दिन तक मुग़ल सेनाओं को रोकते रहे। आखिरकार मुग़ल सेना के सामने वह न टिक सके। पुरंदर किले के सरदार मुरार बाजीप्रभु ने अन्त में जान पर खेलने का निश्चय किया। उसने चुने हुए ६०० मराठा सिपाही अपने साथ

लिये। किले से बाहर निकल पड़े। दिलेरखां ५००० अफ़गान सिपाही और कुछ अन्य सिपाहियों के साथ पुरंदर के किलों की दीवारों पर तोपों की संरक्षा में—चढ़ने की कोशिश कर रहा था। मराठा सिपाही मुरार बाजीप्रभु के नेतृत्व में पठान सिपाहियों से जूझ पड़े। घमासान लड़ाई हुई। मुरार बाजीप्रभु ने मावला सिपाहियों के साथ ५०० पठानों को यमलोक भेजा। चुने हुए ६० मर-मिटने वाले मराठा सिपाहियों के साथ मुरार बाजीप्रभु मौत को हथेली पर रखे दिलेरखां के शिविर की ओर बिजली की गति से बढ़े। एक २ मालवे वीर ने बीसियों पठानों को तलवार के घाट उतारा परन्तु अन्त में मुगल सिपाहियों ने सब मावलों को मार-काट कर धराशायी किया। मुट्ठी-भर मराठे मुगलों की समुद्र समान भारी सेना का कब तक मुकाबला करते? परन्तु मुरार बाजीप्रभु को कोई न रोक सका। मुगल सिपाहियों की टोलियां उन्हें रोकने और उनसे दो २ हाथ करने आतीं परन्तु उनकी तलवार की चमक से चका-चौंध हो लौट जातीं। मुगल महारथियों ने अभिमन्यु की भांति उनको रोकना चाहा परन्तु कोई न रोक सका। उन्होंने दोनों हाथों से तलवार चलाई। कोई पास न फटका। अकेला ही मुगल सिपाहियों को काटता हुआ सेनापति दिलेरखां के शिविर में जा पहुँचा। दिलेरखां ने उसे आत्मसमर्पण करने के लिये कहा और दरबार में ऊंची पदवी देने का प्रलोभन दिया। मुरार बाजीप्रभु ने इसका जवाब तलवार से दिया। दिलेरखान पर वार करने को हाथ उठाया। दिलेरखान ने दिन भर के थके पर वार किया, बाजीप्रभु का सिर धड़ से अलग हो गया। परन्तु कहा जाता है कि सिर के अलग होने पर भी, धड़ दोनों हाथों से तलवारें चलाता रहा। मरते २ कइयों को धराशायी कर गया। साथ में ३००

मावले सिपाही भी धराशायी हुए। बचे हुए सिपाही फिर किले में वापिस चले गये। मुरार बाजीप्रभु के बलिदान की रोमांचकारी कहानी सुनकर अन्दर के शेष सिपाहियों ने जी-जान पर खेलने का निश्चय किया। अन्तिम दम तक लड़ते रहे। दो महीने के निरन्तर युद्ध ने किलेदारों की रसद को कम कर दिया था। इधर मुगल सेनाओं ने किले के कई मुख्य भागों को जीत लिया था। किले के अन्दर रहने वाले परिवारों की रक्षा तथा उन्हें व्यर्थ के रक्तपात से बचाने के लिये, शिवाजी ने जयसिंह के पास रघुनाथ वल्लाल को संधि के लिये भेजा। विजयी जयसिंह ने शिवाजी को स्वयं उपस्थित होकर आत्म-समर्पण करने के बाद संधि-चर्चा करने का अवसर देना स्वीकार किया। शिवाजी ने आत्मरक्षा के आश्वासन पर भेंट करना स्वीकार किया। जयसिंह ने जीवन-रक्षा का आश्वासन दिया।

१० जून को प्रातःकाल नौ बजे पुरंदर किले की तलैटी में जयसिंह के दरबार में शिवाजी की भेंट हुई। रघुनाथ पंडित ने शिवाजी के आने की सूचना दी। भेंट के समय कड़ा पहरा तैनात किया गया। जयसिंह ने भेंट के लिये आते हुए शिवाजी को संदेश भेजा कि यह भेंट उसी अवस्था में हो सकेगी यदि शिवाजी सर्वथा आत्म-समर्पण कर दें और अपने सब किले मुगल बादशाह के आधीन कर दे। शिवाजी ने शर्तें स्वीकार कीं और दो अफ़सरों के साथ भेंट के लिये प्रस्थित हुए। शिविर के दरवाजे पर राजा जयसिंह ने आगे बढ़कर शिवाजी का आलिंगन किया और उन्हें अपने साथ बिठाया। सशस्त्र राजपूतों का कड़ा पहरा तैनात किया। यहां से पुरंदर किले पर हो रही लड़ाई दिखाई देती थी।

राजा जयसिंह ने, पूर्वनिश्चित योजना के अनुसार शिवाजी के दरबार में प्रवेश करते ही, दिलेरखान को पुरंदर किले पर हमला करने का इशारा किया। शिवाजी ने इस रक्तपात को व्यर्थ समझ कर पुरंदर का किला समर्पित करने का निश्चय प्रकट किया। जयसिंह ने संदेशहर भेज कर दिलेरखान को युद्ध बन्द करने और किले में बन्द मराठा सिपाहियों को सुरक्षित बाहर जाने की आज्ञा दी। संदेशहर के साथ शिवाजी ने अपना आदमी भेजकर किले के संरक्षकों को किला दिलेरखान के आधीन करने की आज्ञा दी। परस्पर विचार-विनिमय के बाद निम्नलिखित शर्तें तय हुईं:—

(१) २३ किले मुगल बादशाह के आधीन किये गये।

(२) शेष १२ किले शिवाजी के आधीन रहने दिये गये।

इसके बदले शिवाजी को मुगल दरबार में नौकरी करनी होगी और मुगल बादशाह के प्रति राजभक्ति का भाव प्रकट करना होगा। शिवाजी ने राजा जयसिंह को इस बात के लिये प्रेरित किया कि मुगल दरबार में उपस्थित होने से उसे मुक्त किया जाय। उसके स्थान पर उसका लड़का ५०० घुड़सवारों के साथ रहेगा। शिवाजी ने मुगल दरबार के लिये, बीजापुर दरबार तथा कुतबशाही के विरुद्ध लड़ने और उनके प्रदेशों को मुगलों के लिये जीतने का भी आश्वासन दिलाया परन्तु जयसिंह नहीं माना। इस पुरंदर की संधि के बाद शिवाजी के कई साथी नेताजी पालकर आदि उन्हें छोड़ कर बीजापुर दरबार की सेना में भर्ती होने लगे। बीजापुर दरबार तथा कुतुबशाही के बादशाहों ने शिवाजी और मुगल सेना को एक होते हुए देखकर अपनी सत्ता को खतरे में समझा। पुरंदर की संधि के स्वीकार करने के अगले दिन मुगल दरबार की ओर से

शिवाजी को कई फ़र्मान और सम्मान सूचक दरबारी पोशाकें भी मिलीं।

शिवाजी और नेताजी पालकर ने राजा जयसिंह की सेनाओं के साथ मिलकर बीजापुर पर हमला किया। बीजापुर के बादशाह आदिलशाह ने मुकाबिला किया। जयसिंह ने शिवाजी को पन्हाला किला जीतने के लिये नियत किया। इतने में समाचार मिला कि नेताजी पालकर बीजापुर दरबार से मिल गया है। राजा जयसिंह ने उसको बड़ी जागीरी देकर अपनी ओर लाने की कोशिश की। शिवाजी पन्हाला किला बीजापुर से न छीन सके। यह स्थिति देखकर राजा जयसिंह ने सोचा कि यदि शिवाजी को उत्तर भारत में न भेजा गया तो वह भी नेताजी पालकर की भाँति शर्तों के उतार-चढ़ाव के द्वारा बीजापुर दरबार से मिल जायेंगे और इस प्रकार से दक्खिन में मुगलों की बढ़ती हुई शक्ति तथा प्रभाव को पुनः हानि पहुंचने की सम्भावना पैदा हो जायगी। इसलिये जयसिंह ने बादशाह औरंगजेब को शिवाजी को दरबार में उपस्थित होने की स्वीकृति देने के लिये बार बार लिखा। राजा जयसिंह, शिवाजी को दक्खिन से दूर रखकर, दक्खिन की स्वतन्त्र रियासतों को आधीन करना चाहता था। शिवाजी औरंगजेब के छलपूर्ण व्यवहार से सशंकित थे, वह जानते थे कि दक्खिन से दूर होते ही, उनके पीछे महाराष्ट्र की जनता को संगठित करने वाला कोई न रहेगा। इस समय तक मराठे वीरों के वलिदान से महाराष्ट्र में आत्माभिमान की जो ज्वाला प्रदीप्त हुई थी, वह मन्द पड़ जायगी। शिवाजी दुविधा में थे। पुरंदर की संधि के बाद वह राजा जयसिंह के कहे को टाल न सकते थे।

उनके बालसखा वीर भी चिन्तित थे। औरंगजेब ने शिवाजी

को दरबार में उपस्थित होने की स्वीकृति दे दी थी। शिवाजी को तसल्ली देने के लिए राजा जयसिंह ने शिवाजी की जीवनरक्षा की शपथें लीं। राजा जयसिंह का पुत्र रामसिंह औरंगजेब के दरबार में प्रतिनिधि था। उसने भी शिवाजी को सुरक्षित वापिस भेजने की प्रतिज्ञा की। शिवाजी पुरंदर संधि की शर्तों के सम्बन्ध में बादशाह के साथ दरबार में उपस्थित होकर स्पष्टीकरण भी करना चाहते थे। यदि सम्भव हो सके तो बीजापुर दरबार को मटियामेट करने के बदले, मुगल दरबार का दक्षिण में प्रतिनिधि बनने का मौका मिले, तो उससे भी लाभ उठाना चाहते थे।

सब अवस्थाओं पर विचार कर यही उचित समझा गया कि शिवाजी औरंगजेब के दरबार में उपस्थित हों। उत्तर भारत में जाने के बाद, पीछे शासन का प्रबन्ध इस ढंग से किया गया कि यदि शिवाजी कैद किये जायें या मारे भी जायें, तब भी उनके आधीन प्रदेशों में अव्यवस्था न हो। माता जीजाबाई को राज-प्रतिनिधि (Regent) नियत किया गया। सारा शासन-प्रबन्ध उनके निरीक्षण में किया जाना तय पाया। मोरोपन्त पेशवा, नीरोजी सोमदेव, अन्नाजी दत्ता को कोंकण के प्रान्तों में तैनात किया गया। हरेक किलेदार को सावधान किया कि वह दिन-रात सावधान रह कर मुगलों या बीजापुरियों के दाँवपेच में न फँसे। उत्तर भारत में प्रस्थित होने से पहले, अपने स्वराज्य में शिवाजी ने अचानक निरीक्षण-भ्रमण किया और अपने कर्मचारियों को अनुपस्थिति में भी पहले की भांति नियत नियमों के अनुसार कार्य करने का हुक्म दिया। अपने परिवार को रायगढ़ में रखकर

मार्च १६६६ में उत्तर भारत के लिये विदा हुए। साथ में शम्भाजी, सात विश्वासपात्र सरदार और ४००० सिपाही थे। राजा जयसिंह ने बादशाह की आज्ञा से रास्ते के खर्च के लिए शाही खज़ाना से लाख रुपये दिये और गाज़ीबेग नाम के सेनापति को मार्ग-प्रदर्शन के लिये साथ भेजा। यात्रा में शिवाजी को आगरा से ५ अप्रेल का लिखा हुआ बादशाही पत्र मिला। इसमें शिवाजी को दरबार में शीघ्र उपस्थित होने तथा बादशाह द्वारा सम्मानित होकर दक्खिन वापिस जाने का आश्वासन दिया गया था। साथ ही सम्मान-सूचक वेशभूषा भी भेजी गई थी।

८

शिवाजी की आगरा यात्रा

शिवाजी औरंगज़ेब के चुङ्गल में

शिवाजी मुगल बादशाही की संरक्षा में यात्रा कर रहे थे। औरंगजेब ने राजकर्मचारियों को शिवाजी का स्वागत करने का आदेश दिया हुआ था। स्थान-स्थान पर शिवाजी की उत्तर भारत की यात्रा की चर्चा फैल गई। जनता उत्सुकता, सम्मान और श्रद्धा के भाव से शिवाजी के दर्शनों के लिए पड़ावों पर आती। स्थानीय मुगल शासक शिवाजी को शाही अतिथि समझ कर उनका आतिथ्य करते। औरंगाबाद पहुंचने पर वहां का गवर्नर सफ़सिकाखान शिवाजी के स्वागत के लिये न आया। उसने अपना भतीजा भेजकर उन्हें अपने दरबार में आने के लिये कहा। शिवाजी ने इसका उत्तर उसके पास न जाकर, सीधा अपने लिये नियत स्थान पर जाकर दिया। खान साहेब को लाचार होकर मुगल सिपाहियों के साथ शिवाजी के पास उपस्थित होना पड़ा। शिवाजी औरंगाबाद से बादशाही मेहमान की भांति भेंट तथा उपहार लेते हुए, ६ मई को आगरा पहुंचे। इन दिनों औरंगजेब का दरबार आगरा में था। १२ मई का दिन भेंट के लिये नियत किया गया। औरंगजेब पचासवीं वर्षगांठ मना रहा था। दरबार में औरंगजेब के स्वर्ण-तुला-दान-समारोह की तैयारियां हो रही थीं। दरबार में चारों ओर जगमग और चमक-दमक थी। दरबार-आम में प्रतिष्ठित दरबारी, राजा, राजकुमार

सरदार, नवाब तथा अनेक राज्यों के प्रतिनिधि अपने-अपने स्थानों पर राजसी ठाठ-बाठ में सुसज्जित होकर उपस्थित थे। निश्चित समय पर राजा जयसिंह के पुत्र रामसिंह ने शिवाजी के साथ दरबार में प्रवेश किया। शिवाजी के साथ उनका पुत्र शम्भाजी और उनके अपने दस सेनापति सरदार थे। शिवाजी की ओर से १५००० सुनहरी मोहरें 'नज़र' और ६००० 'निसरा' (भेंट) के रूप में अर्पित की गईं। औरंगजेब ने राजसी आनबान के साथ कहा—"शिवाजी राजा आगे आओ"। शिवाजी राजसिंहासन के सामने उपस्थित हुए और सम्मान सूचक भाव प्रकट किये। औरङ्गजेब ने संकेत द्वारा शिवाजी को तीसरे दर्जे के सरदारों की श्रेणी में पंक्तिबद्ध खड़ा करने की आज्ञा दी। दरबार का कार्य यथापूर्व चलता रहा। औरङ्गजेब शिवाजी को उपेक्षा की अंधेरी खाई में धकेल कर, अपनी जन्म-गांठ की खुशियों में मस्त हो गया।

इस अपमान को शिवाजी न सह सके। वह आपे से बाहर हो गये। झुंझलाए शेर की भाँति गुर्राते वीर-केसरी शिवाजी को, जयसिंह का बेढा रामसिंह सान्त्वना देकर समझाने की कोशिश करने लगा। आकाश में विचरने वाले स्वतन्त्र गरुड़ को, पिंजरे में चैन कैसे हो सकता ? उन्होंने अपनी जीवन-संगिनी तलवार पर हाथ रखा। पता नहीं क्या होने वाला है ? भूषण कवि के शब्दों में शिवाजी ने औरंगजेब को उसके दादा की भांति, रनवास में छिपने के लिए बाधित किया—

कैयक हजार जहां गुर्जबरदार ठाढ़े,
करिके हुस्यार नीति पकरि समाज की ।

राजा जसवन्त को बुलाये के निकट राख्यो,

तेउ लखैं नीरे जिन्हें लाज स्वामी काज की।

'भूषन', तबहुँ ठठकत ही गुसुलखाने,

सिंह लौं झपट गुनि साहि महाराज की।

हढकि हथियार फड़ बांधि उमरावन की.

कीन्ही अब नौरंग ने भेंट शिवराज की ॥१॥

सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिबे के जोग,

ताहि खरो कियो जाय जारिन के नियरे।

जानि गैर मिसिल गुसल गुसा धारि उर,

कीन्हों न सलाम न वचन बोले सियरे।

'भूषन' भनत महाबीर बलकान लागो,

सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे ॥

तमक ते लाल मुख सिवा को निरखि भये,

स्याह मुख नौरंग सिपाह मुख पियरे ॥

'दरबारे-बादशाही' के लेखक के अनुसार, उस शोर-गुल और गड़बड़ को सुनकर कड़कती आवाज़ में औरंगजेब ने पूछा—क्या मामला है !!! रामसिंह ने व्यंग से कहा—'पहाड़ों के शीतल वातावरण में विचरने वाले शेर को आगरा के मैदानों की गर्मी ने बेचैन और परेशान कर दिया है!' शिवाजी, दुर्योधन के राजदरबार में अपमानित पांडवों की भांति, विवश हो दिल ही दिल में घुल कर रह गये। औरंगजेब की दासता में जकड़े हुये राजपूत जो इस समय दरबार में उपस्थित थे, वीर-केसरी शिवाजी के अपमान के प्रतिकार में चूं तक न कर सके। रामसिंह भी, अपने पिता जयसिंह द्वारा शाही

अतिथि के रूप भेजे गये, शिवाजी की मान-रक्षा के लिये कुछ न कर सका। स्वयं अपनी आन-शान तथा मान मर्यादा को दूसरों के आगे समर्पित करने वाले कर ही क्या सकते थे? औरंगजेब ने राजाज्ञा द्वारा शिवाजी को दरबार से बाहर भेज दिया और उन्हें, उनके लिये नियत राजा जयसिंह के निवास स्थान में ठहरा दिया। अतिथि को, राजकीय बन्दी बना कर औरंगजेब ने अपनी नीतिहीनता का परिचय दिया। राजा जयसिंह ने शिवाजी को बड़ी २ आशाएं दिलाकर भेजा था, यह भी सम्भावना थी कि एक बार शिवाजी दरबार में उपस्थित हो जायं और औरंगजेब के प्रति आधीनता प्रकट कर दें, फिर इन्हें दक्षिण का शासक भी बनाया जा सकता था।

× × × ×

बन्दी शिवाजी

परन्तु दूरदर्शी औरंगजेब स्वभाव से अविश्वासी था। वह अपने असली शत्रु को पहचानता था। वह समझता था कि आदिलशाही कुतुबशाही दरबार स्वयं अन्दरूनी अन्तःकलह के कारण जीर्णशीर्ण हो रहे हैं। शिवाजी मौका पाते ही उनको अपने अधीन करने से न चूकेगा। असली शत्रु शिवाजी है। इस मौके से लाभ उठाकर इसे कैद कर आगरा की सीमा, के बाहर, जयसिंह के निवास स्थान में बन्दी कर दिया; और अपने विश्वस्त आदमियों का पहरा लगा दिया। औरङ्गजेब शिवाजी को दक्षिण से दूर आगरा अथवा अफ़गानिस्तान

में कैदी रखकर, स्वयं दक्षिण को जीतने के मनसूबे बांधने लगा। शिवाजी ने असल स्थिति को ताड़ लिया। उन्होंने दरबार के प्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा औरङ्गजेब के सामने उसकी राजनैतिक महत्वाकांक्षा को पूरा करने वाले प्रस्ताव उपस्थित करने शुरू किये तथा बीजापुर और कुतुबशाही को जीतने के लिये अपनी सेवाएं समर्पित कीं। इस प्रकार सब सम्भव उपायों से दक्षिण में जाने की कोशिश की। परन्तु औरङ्गजेब पर किसी बात का असर न हुआ। शिवाजी इस विषम परिस्थिति से घबराये नहीं। वह दिन-रात यहां से निकल भागने की योजनाएं सोचने लगे। अन्त में निम्नलिखित योजना द्वारा शिवाजी औरङ्गजेब के चुङ्गल से निकल भागे।

शिवाजी ने दरबारियों तथा पहरेदारों को अपनी उदारता और विनय-शीलता से अपने अनुकूल बनाना शुरू किया। उन्होंने औरङ्गजेब से प्रार्थना की कि उनके साथ आए हुए मराठे सिपाहियों को दक्षिण वापिस भेजा जाय। औरङ्गजेब ने उनको वापिस जाने की आज्ञा दे दी। इसमें औरङ्गजेब ने शिवाजी को अकेला करने के लिये, और शिवाजी ने उनको सुरक्षित दक्षिण में भेजकर वहां काम करने वालों के सामने मुगलों की असल स्थिति रखने का, अवसर ढूंढा।

शिवाजी बीमार की भांति दिनचर्या व्यतीत करने लगे। हर रोज़ सायंकाल ब्राह्मणों, फ़कीरों और दरबारियों के लिये बँहगियों पर मिठाई के बड़े-बड़े भरे हुए ढोकरे दान-उपहार के रूप में भेजे जाने लगे। शुरू में पहरेदार कई दिनों तक इन ढोकरों की तलाशी तथा जांच-पड़ताल करते रहे पर बाद में बिना जांच के उन बँहगियों तथा मिठाई के ढोकरों को बाहर

जाने देने लगे। १६ अगस्त को शिवाजी ने पहरेदारों को कहला भेजा कि मैं ज्यादा बीमार हो गया हूँ और दिनभर बिस्तर पर लेटा रहता हूँ, अतः मुझे कोई पहरेदार पूछताछ से परेशान न करे।

शिवाजी वैरागी के वेष में

इस प्रकार व्यवस्था करने के बाद शिवाजी ने अपने भाई हीराजी फर्जन्द को अपने बिस्तर पर लिटा दिया। उसने अपने ऊपर चादर तान ली। चादर से बाहर निकले हुए हाथ में शिवाजी का सोने का कड़ा पहन लिया और बीमार बन कर सो गया। इधर शिवाजी सूर्यास्त के बाद उस दिन जाने वाली बहँगियों में, पहले जाने वाली बहँगियों में से एक बहँगी में, एक ओर स्वयं तथा दूसरी ओर अपने बेटे सम्भाजी के साथ पहरे से बाहर निकल गये। उनके पीछे हर रोज़ की भांति मिठाई के टोकरे बाहर भेजे गये। किसी को किसी प्रकार का संदेह न हुआ। मिठाई के टोकरों को बाहर एक एकान्त स्थान में छिपाकर रख दिया गया। बँहगी उठाने वालों को विदा कर दिया गया। शिवाजी अपने पुत्र के साथ वहां से, आगरा से ६ मील दूर एक गांव में विश्वसनीय नीराजी रावजी के पास पहुँचे। जंगल में परस्पर परामर्श करके, सारी टोली दो दलों में बँट गई। शिवाजी ने अपने पुत्र तथा नीराजी रावजी, दत्ताजी त्र्यम्बक और राघवमित्र मराठे के साथ अपने देह पर भस्म रमाली और भभूत हिन्दू साधुओं के वेष में मथुरा की राह ली। शेष साथियों ने अपने घर का रास्ता लिया।

इधर हीराजी फर्जन्द रात भर तथा अगले दिन दुपहर तक बिस्तर में लेटा रहा। पहरेदार शिवाजी के सोने के कड़ों तथा नौकर को बीमार के पांव में मालिश करते देखकर निश्चिन्त रहे। दुपहर के तीन बजे हीरा

जी फर्जन्द अपने नौकर के साथ बाहर निकल गया और जाते हुए द्वार-रक्षकों से कह गया कि देखो शिवाजी बीमार हैं, शोर मत मचाओ; उन्हें आराम से चुपचाप सोने दो।

कुछ समय बाद पहरेदारों ने उस स्थान पर सुनसान सन्नाटा अनुभव किया। अब लोगों का आना-जाना बिल्कुल बन्द हो गया था। उन्हें कुछ २ संदेह होंने लगा। वे शिवाजी के स्थान पर गये और उनके बिस्तर को देखा तो वहां कोई न था। देखकर हैरान और स्तम्भित हो गए। पक्षी उड़ गया। हाथ में आया हुआ शत्रु आंखों में धूल झोंक कर उड़ गया। एकदम कैदखाने के बड़े अफ़सर फुलादखान को इत्तिला दी गई। उसने तत्काल औरंगजेब को शिवाजी के, जादू का प्रयोग कर वहां से निकल जाने की खबर पहुँचाई। उसने कहा हम उन्हें लगातार देखते रहे; पता नहीं कब जादू के चमत्कार से वह आकाश में उड़ गये, या भूमि में छिप गये। औरंगजेब इन बातों से सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसने एकदम चारों तरफ अपने गुप्तचर पीछा करने के लिये दौड़ाए। जहां जो मराठा दिखाई दिया उसे गिरफ्तार करने का हुक्म दिया गया। इतने में शिवाजी को एक दिन का समय मिल गया था। वह कहीं से कहीं निकल गये। आगरा से दक्खिन तक सब मुगलाई थानों और शहरों में गुप्तचरों का जाल फैला दिया गया। परन्तु अब शिवाजी को पकड़ना मुश्किल ही नहीं, असम्भव हो गया। औरंगजेब दांत पीसता रह गया। उठते हुए विद्रोही को तलवार चलाए बिना, रक्त-पात किये बिना, नष्ट कर देने का मनसूबा काफ़ूर हो गया। बेबसी और गुस्से के आवेश में, शिवाजी के निकल जाने की जिम्मेदारी जयसिंह के बेटे रामसिंह पर डाली गई। उसे पदच्युत कर दिया गया। उसका दरबार में आना बन्द कर दिया। इस

समाचार से राजा जयसिंह को बहुत ठेस पहुँची। अपने पुत्र के इस अपमान को देखकर वह निराश हो गया। शिवाजी और औरंगजेब दोनों को कोसने लगा। अपने जाति-भाइयों को अपनी महत्वाकांक्षा के लिये बलि करने वालों के साथ ऐसा ही होता है। जयसिंह इस चिन्दा में परेशान रहने लगा और दक्खिन से उत्तर भारत को रवाना हुआ। उधर शिवाजी दक्खन में सुरक्षित पहुँच गये। जयसिंह रास्ते में ही बीमार होकर यमलोक का यात्री बना।

यदि तुम स्वयं स्वतन्त्र नहीं रह सकते, स्वयं अत्याचारी को ललकार नहीं सकते, तो कम से कम स्वतन्त्रों को पराधीन बनाने वाले तो मत बनो। यदि ऐसा करोगे तो स्वतंत्रतादेवी के शाप के कारण, जीते-जी कराहते हुए सब तरफ से निराश होकर नारकी मौत के यात्री बनोगे!

× × ×

शिवाजी अनेक वेषों में

शिवाजी ने मुगल गुप्तचरों की आंख से बचने के लिये महाराष्ट्र जाने के प्रसिद्ध मार्ग—मालवा खानदेश गुजरात का रास्ता छोड़कर, मथुरा, अलाहबाद, बनारस, गया और पुरी की ओर प्रस्थान किया। वहां से गौंडवाना और गोलकुंडा होते हुए—भारत वर्ष की प्रदक्षिणा करते हुए रायगढ़ में पहुँचे।

मथुरा पहुँच कर शिवाजी ने अनुभव किया कि संभाजी के साथ यह साहसपूर्ण संकटाकीर्ण यात्रा निर्विघ्न समाप्त न हो सकेगी। मथुरा के तीन दक्षिणी ब्राह्मणों कृष्ण जी, काशी और बिसाजी ने अपने आपको खतरे में डालकर, राष्ट्रीयता के नाम पर सम्भाजी को, शिवाजी के

महाराष्ट्र पहुँचने तक अपने साथ रखना स्वीकार किया। यही नहीं कृष्णा जी ने शिवाजी को बनारस तक सुरक्षित पहुँचाने के लिये पथ-प्रदर्शक बनना भीं स्वीकार किया।

शिवाजी ने सन्यासियों वाले, अन्दर से खोखले दण्ड में, जवाहरात और स्वर्ण मुद्राएं भर लीं। कुछ रुपया अपनी जूतियों में छिपाकर रख लिया। साथ जाने वाले विश्वस्त नौकरों के पहने हुए कपड़ों में और उनके मुखों में कीमती हीरे-जवाहरात छिपा दिये। आगरा से मथुरा तक शिवाजी ६ घंटों में पहुँचे। वहां पहुँचकर उन्होंने दाड़ी मूँछ साफ़ कराई। देह पर भस्म रमाई। सन्यासियों के कपड़े पहने। दक्खनी बहुरूपिये हरकारों के साथ भिन्न २ रूपों में शिवाजी रात को यात्रा करते थे। शिवाजी के साथ ५० नौकर थे। इनकी तीन टोलियां बनीं। इन लोगों ने वैरागियों, उदासियों और गोसाइयों के वेश धारण किये।

शिवाजी अपने साथियों के साथ लगातार अपना वेष बदलते हुए यात्रा करने लगे। कभी व्यापारियों का बाना पहनते, तो कभी भिखारियों का वेष। किसी को भी आशा न थी कि वह पूर्वीय प्रदेशों से यात्रा करेंगे—उनका सीधा रास्ता पश्चिमीय प्रदेशों से था। फिर भी मुगल दरबार के और औरंगजेब जैसे सूक्ष्मदर्शी बादशाह के, भारत के कोने २ में फैले हुए गुप्तचर विभाग की आंखों से बचकर निकलना मुश्किल था।

एक शहर में मुगल दरबार के एक अफ़सर अली कुली ने सन्देह होने पर उन सब को गिरफ्तार कर लिया। उसे सरकारी तौर से तो नहीं, परन्तु आगरा में रहने वाले एक मित्र के पत्र से पता लगा था कि शिवाजी वहां से भाग निकले हैं। उसने उन

सब की तलाशी लेनी शुरू की। शिवाजी उससे घबराये नहीं। उन्होंने सावधानी से काम लिया। आधी रात को एकान्त में फौजदार अली कुली को जगाया और उसके सामने अपना असली रूप प्रकट कर उसे हीरे-जवाहरात देकर चुप होने की प्रेरणा की। फौजदार ने भेंट स्वीकार कर ली और शिवाजी को वहां से आगे जाने दिया। अत्याचारी बादशाहों के प्रबन्ध इसी प्रकार के लालची अफसरों के कारनामों से खोखले हो जाते हैं।

जिस शासन में इस प्रकार की रिश्वत लेने की प्रथा चल जाय उसके अन्तिम दिन निकट समझने चाहिएं। साधारण जनता की इच्छा के प्रतिकूल तलवार के बल पर चलने वाले शासकों की जड़ों को, ऐसे रिश्वतखोर लालची अधिकारी ही खोखला तथा छिन्नमूल करते हैं।

इलाहाबाद में गंगा-यमुना के संगम पर स्नान करने के बाद शिवाजी बनारस पहुँचे। यहां पर शिवाजी ने प्रभातकाल के धुँधले उषाकाल में तीर्थयात्री के कर्तव्य तथा पूजा-कीर्तन किया और उसी समय शहर में आगरा से आए हुए, एक हरकारे द्वारा बादशाह की ओर से शिवाजी को गिरफ्तार करने की घोषणा के होते-होते, शिवाजी अंधेरे २ में बनारस से आगे निकल गये।

इस विषय में खाफ़ीखान ने निम्नलिखित घटना का वर्णन किया है—

मैं जब सूरत में रहता था तो एक ब्राह्मण वैद्य ने मुझे निम्नलिखित घटना सुनाई थी।

मैं बनारस में एक ब्राह्मण के पास शिष्य रूप में रहता था। एक बार प्रातःकाल अंधेरे में, मैं नियमानुसार गंगातट पर गया। वहां

एक आदमी ने ज़बर्दस्ती मेरा हाथ खींचा। उसने हीरे-जवाहरात और सुनहरी सिक्के रखते हुए कहा—"इसे खोलो मत, भेंट लेलो और जल्दी-जल्दी स्नान पूजापाठ की विधि करो।" मैं जल्दी में उसका क्षौर कर उसे स्नान कराने लगा, अभी स्नान समाप्त भी नहीं हुआ था कि एकदम शोरगुल मच गया कि आगरा से मुगल दरबार का हरकारा शिवाजी की तलाश में आया है। मैं अभी स्नान कराने तथा अन्य संस्कार कराने के लिए सावधान हुआ ही था कि क्या देखता हूँ कि यात्री वहां से खिसक गया है। तब मैंने समझा कि यह व्यक्ति शिवाजी था। शिवाजी ने मुझे ६ हीरे, ६ अशर्फियां, ६ हुन दिये थे। मैं अपने गुरु के पास नहीं गया, सीधा सूरत में आ गया। वह मकान जिसमें मैं रहता हूं, उसी धन से खरीदा हुआ है।

वहां से शिवाजी जगन्नाथपुरी पहुँचे। अभी तक लम्बी यात्रा पैदल ही होती थी। पुरी में शिवाजी ने घुड़सवारी करने की इच्छा प्रकट की। यहाँ उन्होंने घोड़ों के व्यापारी से घोड़ा खरीदना चाहा। परन्तु उनके पास रुपये न थे। उन्होंने उस व्यापारी को रुपये के स्थान पर सोने की मोहरें देकर घोड़ा खरीदना चाहा। इस समय तक वहाँ भी शिवाजी के आगरा से भाग जाने की खबर पहुंच गई थी। उस व्यापारी ने रुपये के बदले सोने की मोहरें देखते हुए कहा कि तुम शिवाजी हो क्योंकि तुम छोटे से घोड़े के लिए सुनहरी मोहरें दे रहो हो। शिवाजी ने उसको सोने की मोहरों वाली गुथली देकर चुप कराया और स्वयं वहां से तत्काल आगे विदा हुए। तत्पश्चात् जगन्नाथपुरी में स्नान पूजा करके शिवाजी गौड़वाना. हैदराबाद और बीजापुर के प्रदेशों में यात्रा करते हुए अपने घर वापिस रायगढ़ में पहुंचे।

इस साहसपूर्ण यात्रा के सम्बन्ध में निम्नलिखित दन्तकथा भी सुनी जाती है। गोदावरी नदी के तट पर एक गाँव में एक किसान के घर में इन संन्यासियों ने आश्रय लिया। यजमान की वृद्धा माता ने संन्यासियों के सामने नाममात्र की, अल्प मात्रा में भेंट उपस्थित की और कहा कि शिवाजी के लुटेरे सिपाहियों ने अभी इस गांव को लूटकर उजाड़ दिया है। उसने उन सिपाहियों तथा शिवाजी को दिल भर के शाप तथा अपशब्द सुनाए। शिवाजी ने उस किसान का नाम तथा गांव का नाम अङ्कित किया और घर जाने पर उस परिवार को वहां बुला कर उनको दिल खोल कर इनाम दिया और उनकी लुटी हुई सम्पत्ति से ज्यादा सम्पत्ति उन्हें दी।

× × ×

शिवाजी के महाराष्ट्र में सुरक्षित लौटने पर राष्ट्र ने आनन्दोत्सव मनाए। जनता उन्हें अजेय और चमत्कारी पुरुष मानने लगी। सम्भा जी अभी मथुरा में था। शिवाजी ने राष्ट्र में यह समाचार फैलाया कि सम्भाजी मर गया है, इसके लिये सार्वजनिक शोक भी किया गया। यह सब इसलिए किया गया ताकि मुगल गुप्तचर उसकी तलाश में न लगें। कुछ समय बाद शिवाजी ने मथुरा से मराठा ब्राह्मण साथियों के साथ उसे दक्खन में बुला लिया। कहा जाता है कि एक बार मुगल गुप्तचरों को सम्भाजी और उनके साथियों पर सन्देह होगया। उस समय ब्राह्मणों ने भी सम्भाजी के साथ बैठकर भोजन किया। इससें उन्होंने सम्भाजी को भी ब्राह्मण समझा और उनका संशय दूर हो गया। शिवाजी ने सम्भाजी के लौटने पर उसको सुरक्षित पहुंचाने वाले साथियों का सन्मान किया और उन्हें भेंट पुरस्कार दिये। शिवाजी तथा उनके पुत्र के लिये अपने आपको मुसीबत में डालने वालों को भी पर्याप्त दान राशि तथा जागीरें दी गईं।

शिवाजी के इस प्रकार आगरा से बच निकलने पर औरंगज़ेब को बहुत अफ़सोस हुआ। वह शेष जीवन भर इसके लिए पछताता रहा। अपनी अन्तिम वसीयत और मृत्युपत्र में औरंगज़ेब ने इस विषय में इस प्रकार के भाव प्रकट किये—

"किसी भी सरकार (शासनचक्र) को स्थिर पाँव पर खड़ा करने का मुख्य साधन, राजाधिकारियों का उस राष्ट्र में होने वाली सूक्ष्म से सूक्ष्म घटनाओं का पता रखना है। ऐसा न होने पर एक मिनट की लापरवाही तथा असावधानी कई बार चिरकाल के लिए लज्जा तथा शोकजनक परिणामों को पैदा करती है। देखो! इसी प्रकार की असावधानी और लापरवाही के कारण शिवाजी आगरा से निकल भागे। और इस भूल के कारण मुझे जीवन के अन्तिम दिनों में परेशान करने वाली लड़ाइयों में उलझना पड़ा।"

× × ×

१६६६ ई० में शिवाजी के दक्षिण वापिस आने की खबर सर्वत्र प्रमाणित रूप में फैल गई। इस समाचार को सुनते ही शिवाजी के सिपाही तथा अनुयायी स्थान २ पर मुगल सेनाओं के विरुद्ध विद्रोह करने लगे। जयसिंह का प्रभाव तथा नियन्त्रण शिथिल और क्षीण होने लगा। उसने फिर से शिवा जी को अपने चुंगल में फंसाने के लिए अपने पुत्र का शिवाजी की कन्या के साथ विवाह करने का प्रस्ताव-जाल भी बिछाना चाहा। इसके लिए मुगल दरबार के प्रधानमन्त्री जाफ़र खान से पत्रव्यवहार भी किया। परन्तु अब शिवाजी इस जालमें नहीं फँस सकते थे। इस निराशा और पराजय से जयसिंह खिन्न हो गया। बीजापुर के आधीन प्रदेशों पर किये गये आक्रमणों में भी, उसे पराजित होना पड़ा

और बुढ़ापा भी सिर पर आ पहुँचा। शिवाजी के आगरा में जयसिंह के निवास-स्थान से निकल आने के कारण औरंगजेब के हृदय में उसके लिये अविश्वास का भाव पैदा हो गया था। अपने पुत्र रामसिंह को मुगल दरबार में अपमानित होता देख वह बहुत दुःखी हुआ। १६६७ मई में औरंगजेब ने राजकुमार मुअज़्ज़म को दक्षिण का शासक नियत करके भेजा। जयसिंह उसे कार्य-भार सौंपकर उत्तर भारत को रवाना हुआ। रास्ते में २ जुलाई १६६७ को बुरहानपुर में चिन्ता और निराशा से खिन्न जयसिंह परलोक को सिधारा।

६

अपमान का प्रतिकार

दक्षिण से वापिस आकर शिवाजी ने सब से प्रथम यह आवश्यक समझा कि इस समय बिखरी हुई, अनुपस्थिति में शिथिल तथा मन्द पड़ी हुई, अपनी शक्ति को गतिशील और संगठित करें। इसके लिये आवश्यक था कि वह कुछ समय तक रणाङ्गण की चहल-पहल से अलग रहें। संभावना यह थी कि औरंगजेब अपने दल-बल के साथ शिवाजी का दमन करने के लिये स्वयं महाराष्ट्र में आयेगा। परन्तु उत्तर भारत में विद्रोहियों को दबाने में, उसे अपनी शक्ति को लगाना पड़ा। मुगल दरबार में भी उसका उपस्थित रहना आवश्यक था। शिवाजी ने भी औरंगजेब को इधर आने से रोकने के लिये, उसके साथ स्वयं तथा मुअज़्ज़म द्वारा संधि-चर्चा शुरू कर दी।

× × × ×

घटना-संयोग से दक्खन में मुगल दरबार का नया शासक राजकुमार मुअज़्ज़म स्वभाव से आरामपसन्द था। उसकी सहायता के लिये महाराजा जसवन्तसिंह को भेजा गया था। वह भी यथा-संभव लड़ाइयों से पृथक् रहना चाहता था। शिवाजी ने इन दोनों की मध्यस्थी का फायदा उठाकर औरंगजेब के साथ संधि-चर्चा शुरू कर दी। अपने पुत्र

संभाजी तथा अपनी सेना की टुकड़ी को मुगल दरबार में भेजना स्वीकार कर लिया। औरंगजेब ने भी उत्तर भारत के विद्रोह को दबाने के लिये दक्षिण में शान्ति की नीति स्वीकार कर ली। परन्तु दक्खन के विद्रोहियों तथा प्रतिद्वन्दियों पर आंख रखने, और राजकुमार मुअज़्ज़म और यशवन्तसिंह पर निगरानी रखने के लिये अपने विश्वासपात्र अनुभवी सरदार दिलेरखान को भारी सेना के साथ दक्खिन भेजा। उसकी सहायता के लिये दाऊदखान भी साथ था। मुअज़्ज़म तथा यशवन्तसिंह, दिलेरखान के प्रभाव को कम करना चाहते थे। दिलेरखान सीधा मुगल दरबार का प्रतिनिधि बनकर इन्हें शिवाजी के साथ मिलने नहीं देना चाहता था। परिणाम यह हुआ कि राजकुमार मुअज़्ज़म और दिलेरखान में अनबन हो गई। दक्खिन के मुगल कर्मचारी आपस में ईर्ष्या-द्वेष की ज्वाला में झुलस गये। शिवाजी ने इस परिस्थिति से लाभ उठाया। मौका देखकर पुरंदर की अपमानजनक संधि को नष्ट-भ्रष्ट करने का निश्चय किया। इस संधि के कारण शिवाजी को अपने तेईस पहाड़ी किले जयसिंह के द्वारा मुगल दरबार के आधीन करने पड़े थे। मुअज़्ज़म और यशवन्तसिंह की शान्तिप्रिय नीति के कारण शिवाजी ने धीरे २ कई किले वापिस ले लिये। परन्तु रायगढ़ से दीखने वाले, शिवाजी की बाल-लीलाओं के क्रीडा स्थान—कोंडाणा किले पर फहराती हुई मुगल पताका, राजमाता जीजाबाई के हृदय में वेदना और अपमान की ज्वाला को सुलगाती थी। उसका पुत्र आगरा से सुरक्षित वापिस आ गया था। पुरंदर संधि की अपमानजनक कड़ियां भी छिन्नभिन्न हो गई थीं परन्तु कोंडाणा किले पर फहराती हुई मुगलों की पताका, महाराष्ट्रीय स्वाधीनता को हर समय चुनौती दे रही थी। जीजाबाई ने इस किले पर अपना

झंडा लहराने की इच्छा प्रकट की। माता की इच्छा के सामने शिवाजी ने सिर झुकाया। कोंडांणा किले को जीतने की तैय्यारियां होने लगीं।

× × × ×

सिंहों का रोमांचकारी युद्ध

कोंडाणा किले का महत्व समझते हुए, औरंगजेब ने राजपूत वीर उदयभान को इस किले का रक्षक नियत किया था। वीर राजपूत वीरता की आनशान में अपना सर्वस्व लुटा देगा परन्तु रणांगण से पीछे न हटेगा। राजपूत वीरता से डटे रहने को अंतिम लक्ष्य समझते थे। उनके लिये यही अंतिम उद्देश्य था। किसकी ओर से लड़ रहे हैं, किससे लड़ रहे हैं, आपस में लड़ रहे हैं या पराये से, या भाई भाई से—इसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं; उनके लिये तो पीछे हटना मृत्यु है। इसी मनोवृत्ति के कारण विदेशियों ने, "शाबास राजपूत शेर" की थपकी देकर, मानसिंह को प्रताप से लड़ाया—प्रताप को सहोदर शक्तिसिंह से लड़ाया—जयचंद को पृथ्वीराज से लड़ाया। औरंगजेब ने भी यशवन्त को जयसिंह का प्रतिस्पर्धी बनाया और अनेक राजपूतों को मराठों के मुकाबले में वीरता के नाम पर लड़ाया। पुरंदर में भी शिवाजी के सेनापतियों के मुकाबले में 'उदयभान' को इसलिए तैनात किया क्योंकि उसे पता था कि उसके मुगल सिपाही तो चोट लगते ही वीरता की आन बचाने से पहले, अपने शरीर अपने प्राण को बचाएंगे। प्रत्यक्षवादी मुग़ल वीरता, शूरता, चतुरता सब को आत्मरक्षा का साधन समझते हैं।

× × × ×

राजपूत उदयभान अपने मोर्चे पर खड़ा है। शिवाजी का बाल-

सखा तानाजी मालसरे, माता जीजाबाई के आदेश पर पुत्र के विवाह समारोह को छोड़कर, भवानी अर्चना के लिये, कोडांणा की ओर बढ़ा। किला दुर्गम, अजेय तथा सुरक्षित था। परन्तु शिवाजी के बालसखा के लिये महाराष्ट्र की भूमि पर कोई स्थान अगम्य और अजेय नहीं। तानाजी मालसरे ने ३०० चुने हुए मावलिये सरदार अपने साथ लिये। एक अन्धेरी रात को, उस स्थान के रहने वाले कुछ कोली पथदर्शकों के साथ कल्याण द्वार के पास एक पहाड़ी पर, रस्सी की सीढ़ियों से चढ़ गया। वहां से पहरेदारों को मारता हुआ तानाजी किले के ओर बढ़ा। किले के आदमियों ने खतरे का बिगुल बजा दिया। अफ़ीम के नशे में चूर राजपूतों को शस्त्र बांध कर बाहर आने में कुछ समय लगा—इतने में मराठे वीर सिपाही अपना पैर जमा चुके थे। किले के संरक्षक सिपाही प्राणों को हथेली पर रखकर लड़े। परन्तु मावले वीरों के 'हर हर महादेव' के नारे ने राजपूत सिपाहियों में भय और आतङ्क की चिनगारियां बखेर दीं। तानाजी मालसरे और उदयभान दोनों एक दूसरे के आमने-सामने आए। दोनों ने एक दूसरे को ललकारा। दोनों की तलवारें चमचमाने लगीं। दोनों की टक्कर से आंखों को चौंधियाने वाली चिंगारियां निकलने लगीं। कोई पीछे नहीं हटा। घमासान युद्ध हुआ। सुन्द-उपसुन्द की भांति वीरता और विजयलक्ष्मी का आलिंगन करने के लिये दोनों में घमासान युद्ध हुआ। लड़ते-लड़ते दोनों धराशायी हुए। तानाजी मालसरे के धराशायी होते ही, मराठा वीर हतोत्साह होने लगे थे, इतने में उनका भाई सूर्याजी मालसरे आगे बढ़ा। उसने भवानी की तलवार को सम्भाला, वीरों को उत्साहित तथा उत्तेजित किया। किले के अन्दर राजपूत सिपाहियों को तलवार का यात्री बनाकर, किले

के बाहर एकत्र मावले वीरों को अन्दर आने के लिये किले के कल्याण-द्वार के फाटक खोल दिये। मुख्य द्वार के खुलते ही किले पर मराठे वीरों का पूर्ण अधिकार हो गया। इसके बाद मार-काट शुरू हुई। १२०० राजपूत तलवार की धार पर उतारे गये। अनेकों किले से बाहिर निकलने की कोशिश में पहाड़ियों से बचकर निकलने की उलझन में मर मिटे। विजेता मराठों ने—घुड़सवारों की झोंपड़ियों में आग लगाकर—जलती हुई ज्वाला की लपटों से—वहां से ६ मील दूर रायगढ़ किले में शिवाजी को किला जीत लेने की सूचना दी। शिवाजी को किला जीतने की खबर के साथ २ तानाजी मालसरे की मृत्यु का शोकजनक समाचार भी मिला। उन्होंने मर्मान्तक हार्दिक वेदना में "गढ़ आया पर सिंह गया" के हृदयोद्गार के साथ उस किले का नाम सिंहगढ़ रखा। तलवार के धनी दो वीर योद्धाओं के रक्त से सिंचित किले को सिंहगढ़ के सिवाय और किस नाम से स्मरण किया जाता? शिवाजी वीर थे और वीरों की पूजा करना जानते थे। उन्होंने किले का नाम 'सिंहगढ़' रखकर अपने साथी तानाजी का नाम वीरता के इतिहास में अमर कर दिया।

× × × ×

तीन महीने के बाद, मार्च में पुरन्दर का किला भी, अज़ीज़द्दीन खान किलेदार को गिरफ्तार कर, मराठों के हाथ में आ गया। १६७० ई० अप्रेल तक शिवाजी ने माहुली आदि अनेक किले अपने आधीन कर लिये। मुगल सेनापति दाउदखान ने शिवाजी को इन स्थानों पर रोकने की कोशिश की। परन्तु देर तक वह भी मुकाबला न कर सका। दक्खन में सेनापतियों में परस्पर कलह शुरू हो गई थी। शाहज़ादे

मुअज्जम और दिलेरखान में अनबन बढ़ती गई। औरंगजेब ने इनको दूर करने की कोशिश की, परन्तु सफल न हो सका। शिवाजी ने दक्खन के मुगल सेनापतियों की अन्तःकलह से खूब लाभ उठाया। औरंगजेब को अपने पुत्र मुअज्जम पर भी संदेह पैदा हो गया था। औरङ्गजेब की शक्ति भी दिन प्रतिदिन वृद्धवस्था के साथ कमज़ोर हो रही थी। शाहज़ादा मुअज्जम यशवन्त के साथ मिलकर उत्तर भारत को आ रहा था। औरङ्गजेब ने १६७० ई० में उसको एकदम औरङ्गाबाद वापिस बुला भेजा।

इस समय शिवाजी की शक्ति और प्रभुत्व दिन प्रतिदिन बढ़ रहा था। वह औरङ्गजेब के प्रभाव को मटियामेट कर रहा था। जनता उसके प्रभाव के सामने सिर झुका रही थी। पुरन्दर की सन्धि छिन्न-भिन्न हो गई थी। १६७० ई० मार्च महीने में सूरत में रहने वाले अंग्रेज़ी कोठी के व्यापारियों ने अपने मालिकों को निम्नलिखित संदेश भेजा था—

"शिवाजी अब चोरों की भांति मारधाड़ नहीं करता। अब उसके पास ३०,००० हज़ार सिपाहियों के सेना है। वह जिधर बढ़ता है, उधर ही मैदान जीत लेता है। मुग़लों के सेनापति तथा मुगलाई शाहज़ादे उसकी गति को रोक नहीं सकते।"

युद्धों के कारण राजकोष खाली हो रहा था। औरङ्गजेब 'जज़िया' कर द्वारा अपने राजकोष को भर रहा था। शिवाजी ने १६७० ई० के अक्तूबर मास में सूरत पर दूसरी बार हमला किया। डच अंग्रेज व्यापारियों ने आत्मरक्षा में हथियार उठाए। मुगल अफसर शिवाजी को रोक न सके। शिवाजी ने, बिजली के समान चमक कर छिपने और प्रकट होने वाले अपने सिपाहियों की सहायता से सूरत को लूटा!

खूब लूटा !! सरकारी बयान के अनुसार शिवाजी ने ६६ लाख रुपये की सम्पत्ति सूरत से लूटी जिसमें से ५५ लाख की सम्पत्ति सूरत शहर से और १३ लाख की सम्पत्ति नवल साहू और हरिसाहू नाम के व्यापारियों से छीनी। शिवाजी के आक्रमणों तथा संभावित आक्रमणों की अफ़वाहों ने सूरत के व्यापार को बिलकुल तहस-नहस कर दिया। व्यापारी लोग वहां आने से घबराने लगे। शाहज़ादा मुअज्जम ने सूरत की लूट का बदला लेने की कोशिश की। कई स्थानों पर शिवाजी पर हमला करने की योजना की; परन्तु उनकी गति को वह भी न रोक सका। शिवाजी की विजय यात्रायों की धूम सारे देश में मच गई। भारतवर्ष के विविध प्रान्तों के मुगल-अत्यचारों तथा औरंगजेबी शासन नीति से खिन्न, वीर पुरुष शिवाजी के चारों ओर एकत्र होने लगे।

× × ×

छत्रसाल और शिवाजी

१६७०—१६७१ ई० में महोबा के राजा चम्पतराय बुन्देल का पुत्र छत्रसाल, शिवाजी के पास दक्खन में आया। मिर्ज़ा जयसिंह ने इस नवयुवक को शाही सेना में भर्ती कर लिया और गोंड प्रदेश पर इसने मुगल सेना के साथ आक्रमण किया। परन्तु औरंगजेब की अनुदार नीति के कारण इसे असन्तुष्ट और अपमानित होना पड़ा। छत्रसाल मौका देखकर अपनी वीर धर्मपत्नी के साथ, शिकार करने के निमित्त से, शाही फौज से अलग होकर निकल भागा और दक्खन में शिवाजी की स्वतंत्र सेना में भर्ती होने के लिये पहुँचा। शिवाजी ने उसका सम्मानपूर्वक अभिवादन किया और उसकी वीरता की प्रशंसा की। शिवाजी ने छत्रसाल को बुन्देलखण्ड में औरंगजेब के विरुद्ध विद्रोह करने के लिये वापिस भेजा और निम्नलिखित परामर्श दिया—

"सम्मानयोग्य वीरश्रेष्ठ! अपने शत्रुओं को जीतो और उनका दमन करो। अपनी मातृभूमि को शत्रुओं से छीनकर स्वयं उस पर राज करो। उचित यही है कि तुम अपने आधीन प्रदेशों में औरंगजेब के विरुद्ध लड़ाई जारी रखो। तुम्हारी वीरता और स्वाधीनता की तड़प तुम्हारे चारों ओर वीर पुरुषों को इकट्ठा कर देगी। जब कभी मुगल सेनाएं या मुगल दरबार तुम्हारे प्रदेश पर आक्रमण करने का इरादा करेंगे, मैं तुम्हें पूर्ण सहयोग दूंगा। उनको तुम्हारी ओर जाने से रोकूंगा और उनका ध्यान दूसरी तरफ़ खींचने में, उन्हें दूसरे रणक्षेत्र में व्यग्र रखने में कसर न करूंगा।"

छत्रसाल इस वीर-सन्देश को लेकर बुन्देलखण्ड वापिस आया और उसने शिवाजी के परामर्श के अनुसार-बुन्देलखण्ड में मुगलों के विरुद्ध विद्रोह का झंडा खड़ा करके औरंगजेब की शाहनशाही के रोबदाब को मटियामेट करने में कोई बात शेष न रखी। इस प्रकार 'शिवाजी' धीरे २ भारतीय राष्ट्र के स्वाधीनता प्रेमी वीरों का पूजनीय केन्द्र-स्थान बन गये। राष्ट्र के वीर शिवाजी को औरंगजेब की टक्कर का प्रतिद्वन्दी समझ कर उसके चारों ओर इकट्ठे होने लगे।

१६७१—१६७२ ई० में शिवाजी ने लगातार लड़ाइयां करके बगनाला और कोली प्रदेश, कोंकण के जौहर और रामनगर अपने आधीन कर लिये। १६७३ ई० में पन्हाला के प्रदेश को और १६७४ में कोल्हापुर और पोंडा पर शिवाजी का पूर्ण अधिकार होगया। इस प्रकार १६७५ ई० में शिवाजी की राजसीमा पश्चिमी कर्नाटक तक पहुँच गई।

१०

शिवाजी का राज्याभिषेक समारोह

विक्रमार्जित राज्यस्य स्वयमेव नरेन्द्रता।[१]

क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः।[२]

पराक्रम द्वारा राज्य स्थापित करने वाला व्यक्ति अभिषेक और संस्कार की अपेक्षा नहीं रखता; जनता स्वयं ही उसे राजा की तरह पूजने लगती है। जनता शिवाजी को अन्यायी शासकों के अत्याचार तथा अन्याय से रक्षा करने वाले राजा के रूप में पूजती थी। यद्यपि शिवाजी जन्म से मराठा थे और उस समय के रूढ़ीवादी जन्मगत श्रेणीभेदों को मानने वाले थे जो उन्हें द्विज तक मानने को तैयार न थे, परन्तु शिवाजी ने राष्ट्र को, गौ और ब्राह्मण को अत्याचारियों की तलवार से बचाकर अपने आप को सच्चा क्षत्रिय प्रमाणित किया। उनके इस गुणोत्कर्ष को देखकर, उनकी इस चमत्कारी आकर्षण शक्ति और तेज को देख कर, स्वयं जनता उन्हें क्षत्रपति-छत्रपति के रूपमें पूजने लगी। उस समय की जागृत जनता की धार्मिक उमंगों का मान करते हुए शिवाजी ने नियमपूर्वक राज्याभिषेक संस्कार कराना निश्चित किया। गागाभट्ट ब्राह्मण ने शिवाजी को मन्त्र दिया और यज्ञोपवीत धारण कराकर गुणकर्मानुसार क्षत्रिय बनाकर अभिषिक्त

---

[१]पराक्रम से प्रदेश जीतने वाला स्वयं सिद्ध राजा है।

[२]प्राणिमात्र को क्षत आघात से बचाने वाला ही सचा क्षत्रिय है।

राजा होने का अधिकारी घोषित किया । चिरकाल की रूढ़िप्रथाओं और भोगवाद के कारण जीर्णशीर्ण क्षत्रिय जाति के गुणहीन और निश्चेष्ट होने पर, आर्य जाति के संचालक समय समय पर, नए-नए वीर पुरुषों को क्षत्रिय धर्म में दीक्षित कर, नए क्षत्रियों की सृष्टि करते रहे हैं।

आठवीं-नवीं शताब्दी में आबू पर्वत पर इसी प्रकार के नए क्षत्रिय सजाये गये थे । इन वंशों ने चिरकाल तक भारतवर्ष को विदेशियों के आक्रमणों तथा अत्याचारों से सुरक्षित रखा । उत्तर भारत में, पञ्चनद प्रान्त में, गुरु गोबिन्दसिंह ने, पाहुल और चण्डी देवी का यज्ञ रचाकर इसी प्रकार के क्षत्रिय रचाए थे। इधर गुरु रामदास की आध्यात्मिक छत्रछाया में गागाभट्ट ने शिवाजी को क्षात्रधर्म में दीक्षित किया। क्षात्रधर्म में दीक्षित होते समय सुवर्ण छत्र आदि के तुलादान किये गये।

६ जून का दिन राज्याभिषेक के लिये नियत किया गया । ५ जून का दिन संयम-उपवास-व्रत में बिताया गया।

भारत की गंगा आदि पवित्र नदियों के तीर्थजल से शिवाजी ने स्नान किया। गागाभट्ट को ५००० हून दान दिये गये। उपस्थित ब्राह्मणों को सौ-सौ सुनहरी मोहरें दी गईं । १६७४ ई० ६ जून को राज्याभिषेक का समारोह प्रारम्भ किया गया। शिवाजी ने प्रभातवेला में स्नान किया। कुल के इष्ट-देवता की अर्चना की । कुलपुरोहित गागा भट्ट की चरणवन्दना की। पवित्र शुभ्र वेष के साथ सुगन्धित पुष्पमालाएँ धारण कीं। अभिषेक के लिये नियत स्थान पर शिवाजी उपस्थित हुए। इस स्थान पर दो फीट ऊँचे, दो फीट चौड़े सुनहरी-पत्रों से जड़ित आसन पर शिवाजी आसीन हुए। महाराणी सोमराबाई,

शिवाजी के बाईं ओर बैठीं। सोमराबाई का उत्तरीय वस्त्र शिवाजी के उत्तरीय वस्त्र के साथ ग्रन्थिबंधन द्वारा बांधकर सूचित किया गया कि दोनों (शिवाजी और सोमराबाई) इस लोक तथा परलोक में, दोनों एक दूसरे के साथी हैं। राजकुमार सम्भाजी को उत्तराधिकारी के रूप में दोनों के पीछे बिठाया गया। तदनन्तर अष्ट-प्रधान-मंडल के आठों मंत्रियों ने, गंगा-जल से परिपूर्ण आठ सुवर्ण कलशों के पवित्र तीर्थ जलों को शिवाजी, सोमराबाई और सम्भा जी के शीर्ष भागों पर छिड़क कर उनका अभिषेक किया। इसी समय बाजे-गाजे के साथ मंत्र-उच्चारण किया गया। सोलह पवित्र शुद्ध वस्त्र धारण करने वाली ब्राह्मण महिलाओं ने सुवर्ण निर्मित स्थाली में रखी हुई पंच-प्रज्वलित-दीपावलि से शिवाजी की आरती उतारी।

इसके बाद शिवाजी ने अपना वेष-परिधान बदला। सुवर्ण-जटित, जगमगाते हीरे मोतियों तथा स्वर्णाभरणों से सज्जित राजकीय वेष धारण किया। गले का हार, पुष्पों की माला, हीरे मोतियों की लड़ियों से सज्जित पगड़ी धारण की। तलवार, ढाल, धनुष बाण की पूजा की। तदनन्तर पूजनीय वृद्धजनों और ब्राह्मणों को शिरोनत होकर नमस्कार किया। शुभ मुहूर्त में सिंहासन-भवन में प्रवेश किया। सिंहासन भवन अनेक प्रकार की चित्रकारी से अलंकृत था। सिंहासन के ऊपर हीरे मोतियों की लटकती हुई लड़ियों से ओतप्रोत सुवर्ण-वस्त्र लहरा रहा था। भूमिभाग कीमती कालीनों से सजाया गया था। सिंहासन-भवन के ठीक मध्य में कई महीनों के निरन्तर यत्न से निर्मित महनीय रत्न मणियों से जड़ा हुआ सिंहासन भी रखा गया।

सिंहासन की आसन पीठ सुवर्ण शलाकाओं से मढ़ी हुई थी।

आठों दिशाओं में खड़े आठों स्तम्भ हीरे-जवाहरात से जड़े हुए थे। इन आठों खम्भों पर कीमती सुवर्ण चित्रकारी से अलंकृत चांदनी लहरा रही थी। चांदनी की सुवर्ण-चित्रकारी से हीरे मोतियों की मालाएं जगमगाते रत्नों की आभा से प्रदीप्त होकर चमचमा रही थीं। राजसिंहासन पर सिंह-चर्म के ऊपर मखमल सजा हुआ था। सिंहासन के दोनों ओर अनेक प्रकार के राज-चिह्न और शासन-चिह्न सजाए गये थे।

ज्योंही शिवाजी सिंहासन पर आरूढ़ हुए, उपस्थित जनता पर अनेक प्रकार के सुवर्ण-रजत-निर्मित पुष्पों की वृष्टि की गई। तत्काल सोलह विवाहित-ब्राह्मण देवियों ने नवाभिषिक्त राजा की आरती उतारी। ब्राह्मणों ने मंत्र-पाठ के साथ राजा को आशीर्वाद दिया। राजा ने शिरोनत होकर उसको स्वीकार किया। एकत्रित जनता ने "छत्रपति-शिवाजी की जय हो!" के नाद से गगन को गुंजा दिया। बाजे-बजने लगे। गायक गाने लगे। पूर्व-नियत प्रबन्ध के अनुसार शिवाजी के सिंहासनारूढ़ होते ही, मराठा मंडल के सब किलों में तत्क्षण शतघ्नियां (तोपें) आनन्द तथा विजयसूचक गोले चलाने लगीं। इसी समय मुख्य राजपुरोहित गागाभट्ट सुवर्ण-जटित हीरे मोतियों की मालाओं से अलंकृत राजछत्र लेकर आगे बढ़ा और शिवाजी को, स्वतन्त्र सर्वाधिकारी राजा के रूप में 'छत्रपति शिवाजी' की पदवी से अलंकृत किया।

तदनन्तर ब्राह्मणों ने आगे बढ़कर छत्रपति शिवाजी को आशीर्वाद दिये। शिवाजी ने मुक्तहस्त होकर ब्राह्मणों, भिक्षुओं और साधारण जनता को भारी धनराशि दान में वितीर्ण की।

तदनन्तर अष्ट-प्रधान-मंडल के मंत्रियों ने आगे बढ़कर, झुक

कर शिवाजी को नमस्कार किया। छत्रपति शिवाजी ने उन्हें सम्मानसूचक वेष-परिधान तथा राजसेवा के नियुक्ति-पत्र के साथ २ अनेक प्रकार के पारितोषिक, धन, घोड़े, हाथी, जवाहरात और शस्त्रादि वितीर्ण किये। अष्ट-प्रधान-मंडल के सब पदों के फारसी नाम बदलकर उनके स्थान पर संस्कृत नाम प्रचलित किये गये। सिंहासन से कुछ नीचे, उच्च स्थान पर युवराज सम्भाजी, राज-पुरोहित गागाभट्ट और प्रधान मंत्री मोरेश्वर-त्र्यम्बक पिंगले आसीन किये गये। शेष मंत्री सिंहासन के दायीं-बायीं ओर पंक्तियों में श्रेणीबद्ध होकर खड़े हुए। उपस्थित दरबारी और दर्शक सम्मानपूर्वक अपने २ स्थानों पर आसीन हुए।

इस समय प्रातःकाल के ८ बज गये थे। नीराजी रावजी ने अंग्रेज़ों के दूत हैनरी औक्सिनडन को छत्रपति शिवाजी के सामने उपस्थित किया। उसने, यथोचित दूरी से झुककर शिवाजी का सम्मान किया। दुभाषिए नारायण शेणवी ने अंग्रेज़ों की ओर से शिवाजी को हीरे की अंगूठी भेंट रूप में अर्पित की। शिवाजी ने दूर दूर स्थानों से आए हुए दर्शकों को सिंहासन के समीप बुलाया और उन्हें यथोचित पुरस्कार देकर बिदा किया।

इसके बाद शिवाजी सिंहासन से उतरे और एक उत्तम साजबाज से अलंकृत घोड़े पर सवार होकर महल के खुले आंगन में पहुँचे। तदनन्तर शिवाजी ने उस अवसर के लिये सुसज्जित हाथी पर सवार होकर सैनिक जलूस के साथ राजधानी के गली-बाज़ारों में जनता को दर्शन दिये। इस जलूस में मन्त्रिमंडल के साथ २ सेनापति भी सम्मिलित थे। जलूस में दोनों राजपताकाएं—ज़री पताका और भगवा झंडा—दो हाथियों पर सजाकर रखी

गईं। पीछे २ सेनाएं–पदाति, अश्वारोही, तोपवाले और मारूबाजे वाले– अपने २ झण्डों के साथ आरही थी। नागरिकों ने समयोचित आन-शान के साथ अपने मकान, मार्ग और अट्टालिकाएं खूब शान के साथ सजाईं। देवियों तथा महिलाओं ने आरती उतारकर अक्षय-पुष्प वर्षा से शिवाजी का हार्दिक अभिनन्दन और स्वागत किया। शिवाजी ने रायगढ़ पर्वत के अनेक देवमन्दिरों का दर्शन किया, और वहां भेंट-अर्चना करने के बाद राजमहल में वापिस आए। ७ जून को विविध राजदूतों और ब्राह्मणों को दान दिये गये—यह दान १२ दिनों तक दिया जाता रहा। इन दिनों राजा की ओर से लङ्गर भी खोले गये। इस दान यज्ञ में हरेक पुरुष को ३) से ५) तक दान दिया जाता था और स्त्रियों बालकों को एक या दो रुपये दिये जाते थे।

राज्याभिषेक के अगले दिन वर्षाऋतु का प्रारम्भ हो गया और वर्षा ज़ोरों से होने लगी। उपस्थित दर्शकों तथा अतिथियों को इसके कारण पर्याप्त असुविधा हुई। राज्याभिषेक के दस दिन बाद १८ जून को राजमाता जीजाबाई ने वृद्धावस्था में इस लोक से विदाई ली, मानों पुत्र के राज्याभिषेक को देखने की प्रतीक्षा में ही थीं!!! पुत्र को राजसिंहासन पर, अपने हाथों पराक्रम से स्थापित राज्य का छत्रपति बनते देखकर, जीजाबाई के हृदय में जो अलौकिक आनन्द उत्पन्न हुआ होगा, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

★

११

कर्नाटक की विजय-यात्रा

औरंगजेब ने बहादुरखां को शिवाजी और दक्खनी रियासतों पर अधिकार करने के लिये भेजा। शिवाजी का कोष खाली होगया था। वह अभी लड़ाइयों में उलझने को तैय्यार नहीं थे इसलिये उन्होंने बहादुरखान के पास सन्धि की शर्तें भेजकर उसे सन्धिचर्चा में लगाए रखा और दूसरी तरफ़ फोण्ड और कोल्हापुर के क़िलों पर हमला कर उन्हें अपने आधीन किया। औरंगजेब को जब यह समाचार मिले, उसने बहादुरखान को एकदम बीजापुर और शिवाजी पर हमला करने को लिखा। बहादुरखान ने शिवाजी के विरुद्ध उत्तर कोंकण पर कल्याण की ओर से हमला किया। इन्हीं दिनों शिवाजी बीमार हो गये। तीन महीनों तक सतारा में रोग-शय्या पर पड़े रहे। मौका देखकर बहादुरखान ने बीजापुर दरबार में दक्खनी और अफ़ग़ानी दलों के वैमनस्य का फायदा उठाकर बीजापुर के विरुद्ध आक्रमण किया। बहादुरखान के इस आक्रमण से बीजापुर बादशाह का मुख्य अधिकारी बहलोल खां शिवाजी से मिल गया। गोलकुण्डा की कुतुबशाही ने मुगलों के आक्रमण को रोकने के लिये शिवाजी और बीजापुर में सुलह करादी। बीजापुर दरबार ने शिवाजी को, मुग़लों से रक्षा करने के लिये तीन लाख रुपया और कोल्हापुर का ज़िला देना स्वीकार किया। परन्तु यह सुलह देर तक न टिकी। शिवाजी ने इसकी परवाह नहीं की। उन्होंने अपने राजकोष को पूर्ण करने के लिये

कर्नाटक की विजय-यात्रा की तैयारियां कीं और १६७६ ई० में इसके लिए प्रस्थित हुए।

× × × ×

कर्नाटक का प्रदेश अपनी अतुल सम्पत्ति के लिये प्रसिद्ध था। अनेक विजेताओं ने समय असमय पर उस प्रदेश की विजय-यात्रा कर अपने राजकोष को सम्पूर्ण किया था।

इक्ष्वाकु वंश के प्रसिद्ध राजा रघु ने भी यहां के पाण्डव राजाओं को अपना करद बनाकर अपने ऐश्वर्य को बढ़ाया था। महाराजा युधिष्ठिर ने भी राजसूय-यज्ञ करते समय इधर अपने भाई को भेजकर अतुल सम्पति से अपने राजमहलों को परिपूर्ण किया था। अशोक और समुद्रगुप्त भी यहां तक पहुँचे थे। विदेशी अरब निवासी समय २ पर इधर हमले करते थे। उत्तर से आने वाले मुसलमान आक्रान्ताओं में मलिक काफूर व मुहम्मदशाह तुगलक आदि ने भी यहां आक्रमण कर इस प्रदेश की सम्पत्ति को लूटा। परन्तु इन सब आक्रमणों के बाद अब भी यह प्रदेश स्वर्णभूमि माना जाता था। उत्तर भारत के युद्धों तथा गृहयुद्धों के कारण तथा शिवाजी के दमन के लिये भेजी गई सेनाओं पर व्यय के कारण, औरङ्गजेब का राजकोष खाली हो रहा था। उसने अपनी दक्षिणी शासकों को इस प्रदेश को जीतने के लिये आज्ञा दी। गोलकुण्डा की कुतुबशाही पर हमला करने की तैयारियां की जाने लगीं। औरङ्गजेब ने अपने सरदारों को लिखा कि तञ्जौर में शाहजी का बेटा व्यंकोजी शासन करता है। वह निकम्मा और शक्तिहीन है। उस प्रदेश को जीतकर, वहां पुराने समय से दबे हुए खज़ानों को हासिल करो। इधर शिवाजी ने भी अपना राजकोष भरने के लिये इस प्रदेश पर हमला करने की सोची। लोकाचार की दृष्टि

से अपने पिता की जायदाद में अपना भाग लेने की मांग रखी।

औरङ्गजेब और शिवाजी दोनों सम्पत्ति की आशा से कर्नाटक की ओर अपनी सेनाओं की बागडोर मोड़ने की तैयारियां करने लगे। परन्तु औरङ्गजेब अवस्थाओं और परिस्थितियों से जकड़ा हुआ अपनी अभिलाषा को पूर्ण न कर सका। उसकी परखी हुई शक्तिशाली सेनाएं पञ्जाब और उत्तर-पश्चिमी प्रांत में पहाड़ी विद्रोहियों का दमन कर रही थीं। दक्षिण में बहादुरखान के आधीन सेनाएं बीजापुर सरकार के घरेलू-युद्ध में उलझ गई थीं। बहादुरशाह बीजापुर दरबार की पार्टी के साथ मिल गया। स्वयं वह शिवाजी के साथ युद्ध करते-करते थक चुका था। शिवाजी और बहादुरखान ने, दोनों ने एक दूसरे पर हमला न करने और एक दूसरे के शत्रुओं की सहायता, तथा कार्य-क्षेत्र में हस्तक्षेप, न करने का निश्चय किया। शिवाजी ने बीजापुर दरबार के झगड़ों में भाग न लिया। बहादुरखान उधर स्वेच्छापूर्वक चलता रहा। इस सुलह से शिवाजी के प्रदेश में मुगलाई आक्रमण की आशङ्का न रही। शिवाजी इन चिन्ताओं से मुक्त हो गये।

× × × ×

शिवाजी के दो प्रतिस्पर्धी

कर्नाटक में शिवाजी के दो प्रतिस्पर्धी थे। एक, उनका अपना भाई व्यंकोजी, जो तञ्जौर का राजा था। दूसरा, कुतुबशाही का बादशाह। शाहजी ने दीपाबाई के साथ विवाह किया था। व्यंकोजी उसकी सन्तान था। शाहजी की मृत्यु के बाद इधर की सारी जागीर उसी के अधिकार में थी। व्यंकोजी स्वभाव में शिवाजी से उल्टा

था। आरामपसन्द था और महत्वाकांक्षा से शून्य था। शाहजी व्यंकोजी के स्वभाव की कमज़ोरी को जानते थे। इसलिए उन्होंने अपने जीवनकाल में ही राजकार्य का संचालन करने के लिये रघुनाथ नारायण हनुमन्ते को प्रधानमंन्त्री नियत कर दिया था। शाहजी की की मृत्यु के बाद रघुनाथ और व्यंकोजी में दिन प्रतिदिन ईर्ष्या और अनबन बढ़ने लगी। दोनों एक दूसरे पर दोषारोपण करते थे। एक दिन दरबार में कहासुनी हो गई। रघुनाथ ने शिवाजी की आदर्श राजा के रूप में प्रशंसा की और व्यंकोजी को सुस्त, आरामपसन्द और महत्वाकांक्षा से शून्य कहकर उसका अपमान किया। व्यंकोजी ने प्रत्युत्तर में शिवाजी को राजद्रोही एवं विद्रोही कह कर उनकी भर्त्सना की।

इस भर्त्सना से रघुनाथ उत्तेजित तथा अपमानित होकर, नौकरी छोड़ कर ग्लानि और प्रतिहिंसा के भाव से बनारस की ओर चल दिया। मार्ग में हैदराबाद में वह कुतुबशाही के प्रधान मन्त्री मदनपन्त से मिला। उसे शिवाजी और कुतुबशाही में मैत्री कराने के लिये प्रेरित किया, और शिवाजी के साथ इस आधार पर सुलह कराने की प्रेरणा की कि कर्नाटक की विजय-यात्रा से जो सम्पत्ति व विजय प्राप्त होगी उसमें उसका भी भाग रहेगा। वहां से रघुनाथ शिवाजी के पास सतारा में गया। वहां जाकर उसने सारी स्थिति शिवाजी के सामने रखी। शिवाजी ने सब अवस्थाओं पर विचार कर यही उचित समझा कि कर्नाटक की विजय-यात्रा से पहले कुतुबशाह के साथ मैत्री स्थापित की जाय ताकि निश्चिन्त होकर कर्नाटक में

विद्रोहियों तथा प्रतिद्वन्दियों का दमन किया जाय। दोनों में दोस्ती तथा भेंट कराने का कार्य हैदराबाद के प्रधान-मन्त्री मदनपन्त को सौंपा गया।

अपने पीछे महाराष्ट्र की राजव्यवस्था का प्रबन्ध इस प्रकार से किया गया। मोरेश्वर त्र्यम्बक पिंगले पेशवा को प्रतिनिधि राज्याधिकारी नियत किया। अन्नाजी दन्त और दत्ताजी त्र्यम्बक को सेना की एक टुकड़ी के साथ राष्ट्र की रक्षा लिये नियत किया। इन्हीं दिनों १६७६ ई० में नेताजी पालकर दिल्ली में दस वर्ष तक मुसलमान के रूप में रह कर महाराष्ट्र में वापिस आया था। उसकी शुद्धि की गई और उसे मराठा सेना में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया।

१२

हैदराबाद में शिवाजी का राजसी जलसा

शिवाजी और कुतुबशाह में सन्धि हो गई थी। शिवाजी ने प्रह्लादजी नीराजी को कुतुबशाह के दरबार में अपना राजदूत नियत किया। शिवाजी ने लिखा कि तुम बादशाह हसन कुतुबशाह के साथ मेरी मुलाकात का प्रबन्ध करो। पंडित मदनपन्त ने भी दोनों की दोस्ती को पक्का करने के लिये भेंट का होना आवश्यक समझा। उसने भी बादशाह को इसके लिए बार बार प्रेरित किया।

अफ़ज़लखान का वध, शायस्ताखान पर आक्रमण तथा औरङ्गजेब के कारावास से निकल आने की कहानियां उसने सुनी थीं। उनको दृष्टि में रखते हुए उसे शिवाजी पर विश्वास न आता था। वह डरता था कि पता नहीं भेंट में क्या हो ? परन्तु पण्डित मदनपन्त और प्रह्लाद जी नीराजी ने बादशाह को शपथपूर्वक इस विषय में भय की आशंका से मुक्त किया। बादशाह कुतुबशाह ने भेंट करना स्वीकार कर लिया। जनवरी १६७७ ई० को रायगढ़ से शिवाजी भेंट के लिये प्रस्थित हुए। मराठी सेना के ७०००० सिपाहियों को सख्त ताकीद की कि कोई लूटमार न करे। बाज़ारों में सब सामान पैसे खर्च करके खरीदें। कुछेक सिपाहियों ने आज्ञाभंग की। उन्हें अंगछेद और फांसी की सज़ा देकर सब सिपाहियों को सावधान और सतर्क कर दिया। १६७७ ई० को शिवाजी हैदराबाद जा पहुंचे। कुतुबशाह ने अपनी राजधानी हैदराबाद से आगे आकर अगवाई करने का प्रस्ताव किया। शिवाजी ने कहला भेजा कि तुम मेरे बड़े भाई हो, तुम्हें अपने छोटे भाई का स्वागत

करने के लिये आगे आना शोभा नहीं देता। सुल्तान हैदराबाद में रहा। उसके मन्त्री मदनपन्त ने प्रतिष्ठित नागरिकों के साथ शहर से आगे बढ़कर शिवाजी का स्वागत किया और उन्हें हैदराबाद में प्रविष्ट कराया।

हैदराबाद नगर अनेक प्रकार से सजाया गया। बाज़ार तथा गलियां फूलों से सजाई गई थीं। अट्टालिकाओं पर देवियां राज-अतिथि का स्वागत करने के लिए इकट्ठी हुई। बन्दनवार पताका स्थान-स्थान पर लहराये गये। शिवाजी ने अपने सीधे-सादे वेष वाले सिपाहियों तथा सेनापतियों को समयोचित वेषभूषा से अलंकृत होने की आज्ञा दी। जंगली पहाड़ी सिपाही, अयोध्या-प्रवेश के समय रावण को जीतने वाली राम-सेना की भांति, मोती से जड़ी पोशाकों में, सजे हुए घोड़ों पर सवार होगये।

हैदराबाद के नागरिक इन अनेक युद्धों के विजेता, मुग़ल बादशाही को आमूल-चूल जीर्ण-शीर्ण करने वाले सिपाहियों और घुड़सवारों को आश्चर्यचकित नेत्रों से देखते थे। बीच बीच में दक्खनी ब्राह्मण भी अपनी ऊँची बड़ी-बड़ी भौहों और गहरी आंखों तथा तिलक छाप से अङ्कित मस्तकों के साथ अपनी योग्यता के कारण नागरिकों की दृष्टि में विशेष कौतुक पैदा कर रहे थे।

परन्तु इन सब से बढ़कर हैदराबाद के हरेक नागरिक दर्शक की दृष्टि इन अतिथियों की चमत्कारी आत्मा पर केन्द्रित हो रही थी। मंत्रियों और सेनापतियों के चमकते हुए गिरोह के बीच में एक छोटे से कद का अश्वारोही—पिछले दिनों की बीमारी और ३०० मील की

लम्बी यात्रा के श्रम के कारण कुछ क्षीण और थका हुआ—अपनी दायीं-बाईं ओर दृष्टिपात करती हुई चमकती आंखों, और स्वाभाविक स्मित-विकसित चेहरे, और लम्बी आगे से झुकी हुई नाक से जनता को अपनी ओर आकृष्ट कर रहा था। शहर के जिस-जिस स्थान पर वह अश्वारोही पहुँचता, एकत्रित नागरिक 'शिवा छत्रपति की जय' के नारों से आकाश को गुंजाते हुए रजत-सुवर्ण की पुष्पवर्षा द्वारा उसका अभिनन्दन करते। स्थान-स्थान पर अट्टालिकाओं पर बैठी हुई महिलाएँ उतरकर राज-अतिथि को रोककर आरती उतारतीं एवं संगीत द्वारा हार्दिक आशीर्वाद से उसे अभिनन्दित करतीं। शिवाजी ने भी उस स्वागत अभिनन्दन का उत्तर मुक्तहस्त से सोने-चांदी की वर्षा द्वारा किया। स्थान-स्थान पर मुख्य नागरिकों को कीमती वेष-भूषा देकर उनका सम्मान किया।

\+ \+ \+ \+

शाही अतिथियों का जलूस दाद-महल (न्याय प्रासाद) के पास पहुँचा। महल के द्वार के पास सब रुक गये। शिवाजी अपने पांच चुने हुए राज्याधिकारियों के साथ महल की सीढ़ियों पर चढ़ते हुए सिंहासन-भवन में पहुँचे। कुतुबशाह ने आगे बढ़कर शिवाजी का आलिंगन किया और उन्हें राजसिंहासन पर अपने साथ बिठाया। प्रधानमन्त्री मदनपन्त भी बैठ गये। शेष सब खड़े रहे। शाही घराने की देवियाँ, चिकों में से आश्चर्य के साथ सारे दृश्य को देख रही थीं। तीन घंटों तक दोनों बाद-शाह आपस में मैत्री का वार्तालाप करते रहे। एक दूसरे का स्वागत-अभिनन्दन किया गया। कुतुबशाह ने शिवाजी से उनकी आपबीती व जगबीती की रोमांचकारी घटनाएं सुनीं। अफ़ज़लखां का वध, शायस्ताखां

पर हमला, औरङ्गजेब को खुले दरबार में ललकारना, वहां से वापस महाराष्ट्र में आना—कुतुबशाह जैसे आरामपसन्द राजा के लिये ये सब घटनाएं अनोखी और चमत्कारी थीं। वह दाँतों में अंगुली देकर स्तम्भित हुआ इनको सुनता रहा। शिवाजी का वैयक्तिक जादू उसपर छा गया। उसने हीरे, जवाहरात, घोड़े, हाथियों द्वारा शिवाजी तथा उनके प्रमुख राज्याधिकारियों का स्वागत किया। कुतुबशाह ने पारस्परिक मैत्री को दृढ़ करने के लिये, शिवाजी के मस्तक पर सुगन्धित चन्दन चर्चित किया और अपने हाथ से पान का बीड़ा देकर स्वयं महल की सीढ़ियों तक जाकर उनको विदा किया।

इसके बाद कुतुबशाह ने निश्चिन्तता और शान्ति का सांस लिया। उसे शिवाजी की सचाई पर विश्वास हुआ। मराठा राजदूत के आश्वासन के सत्य प्रमाणित होने पर उसकी प्रशंसा की गई और उसे अनेक प्रकार के उपहार पारितोषिक रूप में दिये। इसके बाद दोनों पक्षों में परस्पर अनेक प्रकार के स्वागत उपचार होते रहे।

साथ ही सन्धि की शर्तें भी तय हो गईं। दोनों ने मुगलों के विरुद्ध पारस्परिक सुरक्षा के लिये शपथपूर्वक प्रतिज्ञा की। कुतुबशाह ने अपने तोपखाने का कुछ भाग भी दिया। धन भी दिया। प्रतिफल में, विजय में कुतुबशाह को यथोचित भाग देने का निश्चय किया गया। शिवाजी एक महीने तक हैदराबाद में रहे। शर्तें पूरी होने के साथ साथ आमोद-प्रमोद भी होते रहे। कहा जाता है कि एक बार कुतुबशाह ने शिवाजी से पूछा कि तुम्हारे पास कितने प्रसिद्ध हाथी हैं? शिवाजी ने सुगठित मावला सिपाहियों की ओर संकेत करके कहा कि 'यह मेरे हाथी हैं।' एक दिन मावला सरदार येसाजी कंक का कुतुबशाह के मस्त हाथी के साथ मल्लयुद्ध रचा गया।

येसाजी ने कुछ समय तक तलवार द्वारा हाथी की रोकथाम की, तदनन्तर तलवार के वार से उसकी सूंड काटकर उसे वहां से भगा दिया ।

इसके बाद शिवाजी श्रीशैल आदि तीर्थस्थानों पर यात्रा करते हुए तंजौर पहुँचे । श्रीशैल के आध्यात्मिक वातावरण में शिवाजी संसार के झंझटों से उपरत हो गए और अपने शरीर-त्याग के लिये श्रीशैल को सर्वोत्तम स्थान समझकर भवानी की सेवा में अपने सिर को भेंट करने का संकल्प कर लिया । मन्त्रिमण्डल को जब इसका पता चला उन्होंने एकदम शिवाजी को राजधर्म का उपदेश देते हुए इस कार्य से रोका । यहां शिवाजी ने श्रीगंगेश नाम का घाट बनवाया ।

यहां से विदा होकर शिवाजी अप्रैल १६७७ ई० में अनेक स्थानों से भेंट आदि लेते हुए जिंजी, तिरवाडी आदि स्थानों को आधीन करते हुए त्रिचनापली पहुँचे । यहां रघुनाथ पन्त की मध्यस्थी द्वारा मदुरा के राजा नायक के साथ ६ लाख हून लेकर सुलह की ।

शिवाजी और व्यंकोजी में भेंट

शिवाजी ने अपने भाई व्यंकोजी के साथ भेंट करने के लिये दूतों के द्वारा उसके पास संदेश भेजे । शिवाजी द्वारा जीवनरक्षा का आश्वासन मिलने पर, व्यंकोजी २००० घुड़सवारों के साथ जुलाई मास में तिरूमल-वाड़ी में आया । दोनों भाइयों ने आठ दिन तक वहां पारस्परिक अभि-नन्दन स्वागत किये । इसके बाद शिवाजी ने अपनी पैतृक सम्पत्ति में से ¾ भाग व्यंकोजी से मांगा । व्यंकोजी ने देने से इन्कार किया । इस पर शिवाजी ने उसको सुस्त, निकम्मा और उत्साहशून्य होने के लिये

भर्त्सना की। इस पर उस रात को व्यंकोजी वहां से जगन्नाथ आदि मन्त्रियों के परामर्श से भाग गया। शिवाजी को जब यह पता लगा तो वे बहुत क्रोधित हुए। उन्होंने उन मन्त्रियों को गिरफ्तार कर लिया। अगले दिन खुले दरबार में कहा कि मैं व्यंकोजी को गिरफ्तार करने नहीं आया, परन्तु इन मन्त्रियों ने उसे भाग जाने की सलाह देकर मुझे बेईमान घोषित करने का कार्य किया है। मैं तो केवल पैतृक सम्पत्ति में से अपना भाग मांगने आया था, यदि वह नहीं देता तो न दे। व्यंकोजी मूर्ख है।

इसके बाद उन मन्त्रियों को भेंट-उपहार के साथ तंजौर भेज दिया। साथ ही तंजौर का प्रदेश जीतने का विचार छोड़ दिया। शेष कर्नाटक का प्रदेश अपने आधीन कर शिवाजी तीर्थ-यात्रा करते हुए, मैसूर आदि प्रदेशों पर अपना प्रभाव अंकित करते हुए, सन् १३७८ ईस्वी को महाराष्ट्र में वापिस आये। कर्नाटक की विजय-यात्रा ने शिवाजी का यश दिग्दिगन्त में फैला दिया।

★

१३

शिवाजी की औरंगज़ेब के नाम चिट्ठी

कर्नाटक विजय-यात्रा से महाराष्ट्र वापिस आने पर शिवाजी ने राष्ट्र की राजनैतिक स्थिति का सिंहावलोकन किया। बीजापुर की आदिलशाही कुतुबशाही के राजवंश क्षीण हो रहे थे। मुगल सेनापति उन्हें हथियाने के लिये कई प्रकार के षड्यन्त्र रच रहे थे। कभी उन्हें आपस में लड़ाते थे, उनमें पारस्परिक युद्ध पैदा करते थे, कभी उन्हें मराठों के विरुद्ध उत्तेजित करते थे और कभी मराठों को उनके विरुद्ध। इन षड्यन्त्रों के साथ साथ औरंगजेब ने 'जज़िया' नाम का कर हिन्दुओं पर लगाने की घोषणा करदी थी। इससे दक्षिण में, मुगलाई प्रदेशों की हिन्दू जनता 'त्राहि त्राहि' करने लगी। ऐसे समय (१६७६ ईस्वी) में शिवाजी ने औरंगज़ेब के नाम निम्नलिखित चिट्ठी लिखवाई। इस चिट्ठी से शिवाजी की उदारता, दूरदर्शिता तथा आत्मविश्वास की झलक पद-पद पर प्रकट होती है। यह पत्र आज भी भारत की हिन्दू-मुसलिम जनता के लिये मार्गदर्शक हो सकता है। आज भी कुतुबशाह और शिवाजी— मुसलमान और हिन्दू—भिन्न भिन्न मज़हबों में रहते हुए भी राजनैतिक स्वत्वों की दृष्टि से एक प्लैटफार्म पर एकत्रित हो सकते हैं। दिल्ली की राजगद्दी के अत्याचार सब के लिये समानरूप से होते हैं। यही सचाई उन दिनों शिवाजी, गोलकुण्डा और बीजापुर की बादशाहियों द्वारा साथ-साथ अनुभव की जा रही थीं। परन्तु दिल्ली के आलमगीर ने जनता

के आराम की अपेक्षा, अपनी महत्वाकांक्षा और प्रतिष्ठा कायम रखने के लिये राजकोष भरने के लिये जज़िया लगाने में भी संकोच नहीं किया।

श्री यदुनाथ सरकार द्वारा लिखित 'औरंगज़ेब' पुस्तक में प्रकाशित अंग्रेज़ी भाषा में अनुवादित-पत्र का हिन्दी अनुवाद नीचे दिया जाता है—

"शाहंशाह आलमगीर औरंगजेब की सेवा में—

"शिवाजी आपका सदा दृढ़ हितेच्छु है। परमात्मा की कृपा और आपकी मेहरबानियों के लिये आपका धन्यवाद करता है। यद्यपि मुझे प्रतिकूल दैव के कारण आपको बिना मिले आपके दरबार से अचानक आजाना पड़ा, तथापि मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं आज भी एक कृतज्ञ सेवक की भांति आपकी सेवा करने के लिये कटिबद्ध हूँ।

"मैंने सुना है कि मेरे साथ जो आपके युद्ध हुए हैं उनके कारण आपका शाही खज़ाना खाली हो गया है, इसलिये आपने उस खज़ाने को पूरा करने के लिये हिन्दुओं पर 'जज़िया' नाम का 'कर' लगाने की आज्ञा जारी की है। आपको मालूम है कि इस बादशाही का निर्माण जलालदीन अकबर ने किया था। उसने ५२ साल तक राज्य किया। इस काल में उसने 'सुलह-ए-कुल' नीति स्वीकार की थी। उसके राज्यकाल में क्रिश्चियन, यहूदी, मुसलिम, दादू, फलकिया, मलाकिया, अनासरिया, दहरिया, ब्राह्मण, जैन—सभी परस्पर प्रेमपूर्वक रहकर अपने-अपने धर्मों का पालन करते थे। अकबर की शासननीति का उद्देश्य इन सबकी रक्षा करना तथा इन्हें प्रसन्न करना था। इसीलिये उसका नाम 'जगद्गुरु' प्रसिद्ध हुआ। उसके बाद जहांगीर ने बाईस साल तक और शाहजहां ने

बत्तीस वर्ष तक इसी नीति के अनुसार शासन कर अपने २ नाम अमर किये। दोनों बादशाह सब के प्रिय और न्यायकारी समझे जाते थे। इन तीनों बादशाहों के शासनकाल में सल्तनत की सम्पत्ति और ऐश्वर्य चरमसीमा तक पहुंचा। नए २ प्रदेश और नए २ किले इनके राज्य में सम्मिलित हुए। छोटे-बड़े सब लोग आराम से शान्तिपूर्वक स्वतन्त्रता का जीवन व्यतीत करते थे। सब लोग इनकी प्रशंसा करते हुए नहीं थकते थे।

"परन्तु आपके शासनकाल में कई किले और कई सूबे मुगलाई बादशाहत से अलग होगये हैं, और कई सूबे और किले अलग होने वाले हैं। मेरी तरफ से आपकी सल्तनत को तहसनहस करने और सूबों तथा किलों को छीनने में कोई कसर न रहेगी।

"आपके इलाकों में कृषक लोग पददलित हो रहे हैं। ज़मीनों की फसलें कम हो रही हैं। लाखों रुपयों के स्थान पर हजारों और हजारों के स्थान पर दस वसूल किये जाते हैं और वह भी बड़ी दिक्कत के साथ! जब शाहंशाह और उसके शाहज़ादों के महलों में निर्धनता और भिखारीपन प्रवेश कर चुके हैं, तो इससे सरकारी अफ़सरों तथा हाकिमों की अवस्था का अनुमान लगाया जा सकता है। तुम्हारे शासनकाल में राज्य की फौजों में असन्तोष बढ़ रहा है। व्यापारी असुरक्षा के कारण शिकायतें करते हैं, मुसलमान चिल्ला रहे हैं, हिन्दू पीसे जा रहे हैं। सैंकड़ों लोग रात को भूखे सोते हैं, दिन में निराश हो भाग्य को रोते हैं।

"पता नहीं आप किस शाही ख्याल में, जनता की इन तकलीफ़ों को जज़िया 'कर' लगाकर और भी बढ़ा रहे हैं! आपके इन कारनामों से आपकी बदनामी पूर्व से पश्चिम तक फैल जायगी और इतिहास की

पुस्तकों में दर्ज किया जायगा कि किस प्रकार हिन्दुस्थान के बादशाह औरंगजेब आलमगीर ने राजकोष भरने के लिये भिखारियों के पेट काटकर, ब्राह्मण और जैनी फकीरों से 'जज़िया कर' वसूल किया। आप दुर्भिक्ष-पीड़ित भूखे भिखारियों पर अपना बल प्रयोग करके तैमूर वंश के नाम को मटियामेट कर रहे हैं।

"बादशाह सलामत! यदि आप ईश्वरीय किताब कुरान में विश्वास रखते हैं, तो वहां देखिये। वहां परमात्मा को (रब्बे-उल आलमीन) 'मनुष्य मात्र का मालिक' कहा है, केवल मुसलमानों का मालिक (रब्बे-उल-मुसलमीन) नहीं कहा। यथार्थ में हिन्दूधर्म और इस्लाम एक दूसरे के प्रतिरञ्जक पूरक हैं। परमात्मा ने मनुष्य जाति के भिन्न २ रूप-रंग की रेखाओं को पूरा करने के लिये इस्लाम और हिन्दूधर्म का प्रयोग किया है। यदि पूजास्थान मसजिद है, तो वहां परमात्मा की स्मृति में आयतें गायी जाती हैं। यदि पूजास्थान मंदिर है, तो वहां परमात्मा के दर्शनों की उत्कंठा में घंटे-घड़ियाल गुंजाए जाते हैं। किसी मनुष्य के धार्मिक विश्वास और कर्मकाण्ड के लिये अन्धश्रद्धा तथा असहिष्णुता का प्रदर्शन करना 'इलहामी पुस्तक' की आज्ञाओं को बदलना है। नई २ बातें तथा प्रथाएं जारी करना दिव्य चित्रकार की कृति में दोष दिखाने के बराबर है।

"न्याय की दृष्टि से जज़िया 'कर', किसी भी दशा में नियमानुकूल नहीं कहा जा सकता। राजनैतिक दृष्टि से यह 'कर' लगाया जा सकता है, हां, यदि आपके राज्य में ऐसा प्रबन्ध हो कि एक सुन्दर युवती सोने के गहनों से अलंकृत एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त तक बिना किसी भय

और बलात्कार के आ जा सके। परन्तु इन दिनों तो बड़े बड़े आबाद शहर लूटे जा रहे हैं। असुरक्षित खुले देहातों का तो कहना ही क्या! जज़िया 'कर' जहां न्यायकी दृष्टि से अनुचित है, वहां भारतवर्ष के इतिहास की परम्पराओं की दृष्टि से यह एक नई अनोखी बात है। यह 'कर' सामयिक स्थिति की दृष्टि से अनुचित और अनावश्यक है।

"यदि आप जनता पर अत्याचार करना और हिन्दुओं को भयभीत करना अपना धार्मिक कर्तव्य समझते हैं तो आपको साधारण जनता से यह 'कर' वसूल करने से पहिले मेवाड़ के राणा राजसिंह से यह जज़िया वसूल करना चाहिए। राणा राजसिंह हिन्दुओं के शिरोमणि महाराणा हैं। तब आपके लिये मुझ से यह 'कर' वसूल करना कठिन न होगा क्योंकि मैं आपका अदना सेवक हूँ। परन्तु चींटियों और मक्खियों का शिकार करना आप जैसे बलवान शक्तिशाली व्यक्तियों को शोभा नहीं देता।

"मुझे आपके नौकरों तथा अफ़सरों की निराली ईमानदारी एवं राजभक्ति पर आश्चर्य होता है, कि वह आपके सामने असली वस्तुस्थिति को रखने में भारी लापर्वाही कर रहे हैं। वे जलती हुई आग पर तिनके और भूसा डालकर भी उसकी लपटों को आपके सामने प्रकट नहीं होने देते। मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको सुबुद्धि दें जिससे आपका शाहंशाही सूर्य परम्परागत महिमा के क्षितिज के ऊपर सदा चमकता रहे।"

★

१४

छत्रपति शिवाजी की जय !

कर्नाटक से वापिस आते हुए शिवाजी बेलगाम में बलवाड़ी ग्राम में पहुँचे। यहां की सावित्रीबाई नाम की जमीदारन देवी ने शिवाजी की सेना के कुछ बैल लूटे थे। मराठा सिपाहियों ने उसका किला घेर लिया। २७ दिन तक वह वीरांगना स्वयं लड़ती रही। उसने मराठा सिपाहियों की एक न चलने दी। अन्ततः मराठा सेना ने हमला किया और सावित्रीबाई पराजित होकर किले से भाग निकली। शिवाजी के सेनापति सक्खुजी गायकवाड़ ने इसे गिरफ्तार कर लिया और उसका भारी अपमान किया। शिवाजी के पास यह समाचार पहुँचा। एकदम सक्खुजी गायकवाड़ को गिरफ्तार किया गया। उसकी दोनों आंखें निकलवा दीं। उसको राक्षसी पाप का यथोचित दण्ड दिया गया और शेष आयु उसे मनौली गांव में कैद किया गया। शत्रु महिला पर भी किए गये अत्याचार को न सहकर, शिवाजी ने मातृशक्ति के प्रति सम्मान का भाव प्रकट कर, मित्र एवं शत्रु की दृष्टि में, राजमाता जीजाबाई के यश को दिग्दिगन्त में चिरस्थायी कर दिया !

\+ + + +

शिवाजी को समाचार मिला कि उसके पुत्र संभाजी ने एक ब्राह्मण विवाहिता देवी पर बलात्कार कर उसका सतीत्व नष्ट किया है। शिवाजी इससे पहले भी संभाजी की स्वेच्छाचारिता की बातें सुन चुके थे। शिवाजी को सार्वजनिक-कामों में लगे रहने के

कारण संभाजी की देखभाल करने का अवसर भी न मिला। इसके विपरीत समय २ पर संभाजी को मुग़ल दरबार के दरबारियों के संग में रहने से, मुगल सेनापतियों के साथ आमोद-प्रमोद का अवसर मिलने से वह व्यसनी हो गया था। मुगल बादशाह का इसमें स्वार्थ था कि वह शिवाजी के उत्तराधिकारी को शिवाजी की भाँति शक्तिशाली आत्माभिमानी, तपस्वी और संयमी न बनने दे। शिवाजी सम्भाजी की की इन कमियों को जानते थे। इसीलिये अपनी अनुपस्थिति में वह शासनतंत्र में सम्भाजी को दायित्व का कार्य न देते थे। इस बलात्कार की घटना ने शिवाजी के मन्यु को प्रदीप्त किया। पितृमोह और राज-कर्तव्य में से शिवाजी ने राजकर्तव्य पालन किया और संभाजी को पन्हाला के किले, में नज़रबन्द कर दिया। मौका देखकर सम्भाजी अपनी धर्मपत्नी येसुबाई को लेकर कुछ साथियों के साथ किले में से भाग निकला। मुगल सेनापति दिलेरखान ने रक्षक-सेना भेजकर उस का सूपा से ८ मील की दूरी पर कारकम्य स्थान पर अभिनन्दन किया। औरङ्गजेब को इसकी सूचना दी गई। उसने संभाजी को राजा का खिताब देकर ७ हज़ार की हैसियत दी, और एक हाथी भेंट किया।

× × × ×

शिवाजी समय-समय पर दूत भेजकर संभाजी को समझाते रहे। उसे सन्मार्ग पर लाने की कोशिश भी की। दिलेरखान बीजापुर पर हमला कर रहा था। दिलेरखान ने मार्ग में अथनी नाम की व्यापारी मंडी को भस्मसात् कर दिया। वहाँ के हिन्दू नागरिकों को बाज़ार में बेचने का निश्चय किया गया। सम्भाजी ने इसका विरोध किया परन्तु उसकी कुछ न चली। मौका देखकर २० नवम्बर १६८० को

संभाजी अपने साले महादजी निम्बालकर की भर्त्सना पर, तथा स्वाभिमान को लगी ठेस के कारण, उद्विग्न एवं खिन्न होकर मुग़लों के शिविर कैम्प में से अपनी धर्मपत्नी येसुबाई को मर्दाना वेष पहना कर निकल भागा, और बीजापुर पहुँच गया। वहां मसूद ने उसका स्वागत किया। दिलेरखान ने संभाजी का पीछा किया परन्तु संभाजी एकदम शिवाजी के भेजे हुए घुड़सवारों के साथ पन्हाला पहुँच गया।

शिवाजी ने सम्भाजी को बहुत समझाया। उन्होंने उसके सामने कर्त्तव्यपालन तथा लोकसेवा के आदर्श रखे। उसकी धार्मिक भावनाओं को जगाया। अपना संचित राजकोष तथा दूर २ स्थानों से आए हुए सम्मानपत्र दिखाए और उसे प्रेरित किया कि वह अपने वंश का, अपनी जाति का व धर्म का ख्याल रखे। उसे राज्य का उत्तराधिकारी होने के नाते कर्त्तव्यपालन के लिये प्रेरित किया। महाराणा प्रतापसिंह की भांति शिवाजी को भीवन भर स्वातन्त्र्य-युद्धों में अपराजित होते हुए भी अन्त समय में पुत्र के भावी जीवन की चिन्ता के साथ राज्य की चिन्ता ने चिन्तित किया।

इन्हीं दिनों मानसिक आधियों और चिंताओं के साथ २ शिवाजी ज्वर और डीसैन्ट्री (लहू के दस्त) की बीमारी से पीड़ित हो गये। १२ दिन तक बीमार रहे। धीरे-धीरे मृत्यु के चिह्न प्रकट होने लगे। जीवन की आशा छूट गई। शिवाजी ने भी स्वयं इसका अनुभव किया। कई बार बीच में मूर्छा भी छा जाती थी। बालसखा, वीर सखा, युद्ध सखा, अष्टमंडल के दरबारी, शिवाजी के पास आते जाते और अपने सम्राट् के अन्तिम दर्शन समझ कर विलाप करते। शिवाजी मृत्यु की सांस में भी उन्हें ढारस बंधाते और बलिदान, त्याग और पारस्परिक सहयोग से निर्माण किए गये राष्ट्र की रक्षा के लिये कटिबद्ध होने की प्रेरणा

करते। शिवाजी को अनेक बार खूनी घातक वारों से बचाने वाले उनके शरीररक्षक, मृत्यु के सामने अपनी तथा अपने सम्राट् की बेबसी को अनुभव कर रहे थे। उसके अटल नियमों के सामने किसी की न चली। कोई भी मृत्यु के वार को न रोक सका। ५ अप्रैल रविवार १६८० ई० चैत्र मास की पूर्णिमा के दिन दुपहर को शिवाजी ५३ वर्ष की आयु में सदा के लिये सो गये। उस गहरी नींद में लीन हुए जिससे कोई किसी को जगा नहीं सकता। शिवाजी के अन्तःपुर और मराठा-मंडल ने इस समाचार को दुःख और चिन्ता के साथ सुना। लगातार अनथक परिश्रम और दो बार की लम्बी बीमारी के कारण तथा संभाजी के भावी जीवन की चिन्ता के कारण जीवन के अन्तिम दिनों में शिवाजी का तन और मन थक चुका था, प्रकृति के नियम के अनुसार अब विश्राम लेना ही स्वाभाविक था!

× × × ×

शिवाजी अपने यौवनकाल में भयंकर संघर्ष में उलझे रहे। परमात्मा की लाड़ली, सौभाग्यशाली जातियों को ही शिवाजी जैसे प्रतिभाशाली नेता प्राप्त होते हैं। भारतीय आर्यजाति का सौभाग्य था कि उसे शिवाजी जैसा नेता मिला। उन्होंने आर्यजाति को पराजित स्थिति से निकाल कर अपने पैरों पर, आत्म-गौरव के शैल पर, पुनः खड़ा किया और अत्याचारियों का मुकाबला करने के लिये कटिबद्ध किया। शिवाजी ने अपने अलौकिक प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के द्वारा भारतवर्ष में नवयुग का प्रारम्भ किया। नई परिस्थितियों में नये युग का निर्माण क्रान्तिकारी व्यक्ति ही कर सकते हैं। ऐसे व्यक्ति ही नई परिस्थि-

तियों का मुकाबला करने के लिये नए साधन जुटा सकते हैं। शिवाजी के प्रादुर्भाव के समय भारतवर्ष में नई दुनिया बन रही थी।

राजनैतिक क्षेत्र में भारतवासी धर्मयुद्ध करने के अभ्यासी थे। परन्तु विदेशों से आने वाले आक्रान्ता छल-युद्ध करने में संकोच न करते थे। राजपूतों ने छल-युद्धों का मुकाबला धर्मयुद्धों से करना चाहा। वे सफल न हो सके। उन्हें मैदान छोड़ने पड़े। विदेशी प्रबल होते गये। शिवाजी ने परिस्थितियों के अनुसार विदेशियों के छल-युद्धों का मुकाबला करने के लिये सदाचार और आर्य-राजनीति पर आश्रित माया-युद्धों के करने में संकोच नहीं किया। वर्तमान युग में आर्य-धर्म के प्रवर्तक ऋषि दयानन्द ने भी इन शब्दों में इसका उपदेश दिया है:—

"इस प्रकार लड़ना कि जिससे निश्चित् विजय होवे, आप बचे। जो भागने से वा शत्रुओं को धोखा देने से जीत होती हो तो ऐसा ही करना।" सत्यार्थप्रकाश तृतीय समु० क्षात्रधर्म।

× × ×

मुगलों ने तोपों की सहायता से भारतीय राजवंशों को युद्ध में पराजित करना शुरू किया। शिवाजी ने तोपों का मुकाबला करने के तोपखानों का संग्रह किया। शिवाजी के समय में ही युरोपियन जातियों—डच, अंग्रेज़, पुर्तगाल आदि, ने जहाज़ों द्वारा युद्ध करने की प्रथा शुरू की। शिवाजी ने भी उनके मुकाबले में अपने जहाज़ तथा समुद्री बेड़े तैयार किये। आवश्यकतानुसार रूढ़ियों के बदलने में संकोच नहीं किया। इसीलिये युरोपियन लोग शिवाजी के जीते-जी उनके मुकाबले में खड़े न हो सके और उनसे भयभीत होते रहे। शिवाजी का इन युरोपियन लोगों पर भारी आतंक था।

भारत की प्राचीन परम्परा के अनुसार युद्ध करने का काम क्षत्रियों का है, परन्तु शिवाजी ने सामयिक आवश्यकताओं को अनुभव करते हुए शस्त्र बाँधने तथा युद्ध में सिपाही बनकर आगे आने का अवसर प्रत्येक राष्ट्रभक्त को दिया। शिवाजी के साथ स्वतन्त्रता-युद्ध में भाग लेने वाले व्यक्ति किसी एक श्रेणी-विशेष के न थे। उनकी सेना में, उनके राष्ट्रीय कार्यकर्तृ मण्डल में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सबको बराबर अवसर दिया जाता था। उन्होंने राष्ट्र-सेवा के काम में जन्मगत जातपांत के भेदों की परवाह नहीं की। इसीलिए वह सदा विजयी रहे। शिवाजी की मृत्यु के बाद पेशवा इस नीति का पालन न कर सके, इसीलिये वह चिरकाल तक अपनी स्वाधीनता कायम न कर सके।

शिवाजी ने यथाशक्ति-परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन किये। परन्तु जहाँ तक उनके परिवारिक जीवन का सम्बन्ध है, शिवाजी एक समय में बहुविवाह की प्रथा को न तोड़ सके। इसके अनेक कारण थे। यदि शिवाजी ने महाराजा रामचन्द्र की भांति एक पत्नीव्रत का पालन किया होता तो उनकी मृत्यु के बाद छत्रपति का राजवंश घरेलू झगड़ों में न उलझता। शिवाजी का यह दोष उनके अनेक गुणों की रश्मियों में चन्द्रमा ने कलंक की भाँति लुप्त हो जाता है।

× × × ×

छत्रपति शिवाजी की जीवनकथा का पारायण करने के बाद वर्तमान भारत निवासियों के सामने यह प्रश्न उपस्थित होता है कि

यदि आज शिवाजी जीवित होते तो वह भारत की वर्तमान राजनीतिक पहेलियों को सुलझाने के लिये क्या करते ?

इसका विस्तृत उत्तर अप्रासंगिक होगा। इसका उत्तर देने के लिये हम इस कथा का पारायण करने वाले हरेक श्रोता व पाठक के सामने निम्नलिखित प्रश्न उपस्थित करते हैं—

यदि आप शिवाजी के समय में जीवित होते तो आप उस समय क्या करते ?

इस प्रश्न के उत्तर में ही प्रथम प्रश्न का उत्तर आ जाता है। इस जीवन-चरित्र को पढ़कर अपने आप को शिवाजी और उसके बाल सखाओं की स्थिति में रखने का यत्न कीजिये।

× × × ×

छत्रपति शिवाजी ने आत्म-बलिदान द्वारा आर्य-जाति के सामने विजय का संदेश रखा। आज मित्र व शत्रु सभी शिवाजी की राजनीति, कुशलता और मौलिकता का सिक्का मान रहे हैं। शिवाजी भारतीय जनता के आराध्यदेव बन चुके हैं। आत्म-बलिदान करने वाले शिवाजी की स्मृति को अमर बनाने के लिये हमें जनता की सेवा का व्रत हृदयों में धारण करना चाहिये। यही सच्चा शिवसंकल्प हमें शांति और कल्याण प्राप्त करा सकता है।

★

वीर-रस-पूर्ण जीवन-चरित्र

महाराणी झांसी

[ले०—श्री शान्तिनारायण जी]

'महाराणी झाँसी' ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें भारतीय स्वतन्त्रता की प्राप्ति के प्रथम प्रयास का वर्णन है। इसे पढ़ कर १८५७ के विप्लव का रोमांचकारी दृश्य आँखों के सामने आ जाता है। तांत्या-टोपी ने जिस वीरता से और महाराणी झांसी ने जिस निडरता से, हथियारों से सुसज्जित होकर विदेशियों का मुकाबिला किया, उसे पढ़ कर आज भी कोई भारतीय रोमांचित हुए बिना न रह सकेगा।

इस पुस्तक की विशेषता यह है कि आज तक १८५७ के बारे में जहां सब पुस्तकें अंग्रेज़ी दृष्टिकोण से लिखी गई हैं, वहाँ यह पुस्तक पूर्णतया भारतीय गौरव-गान के हित लिखी गई है। उपन्यास होते हुए भी इसमें स्थान-स्थान पर लिखित बातों की पुष्टि के लिये ऐतिहासिक प्रमाण दिये गये हैं। वास्तव में यह बड़े अन्वेषण के बाद लिखी गई है।

मूल्य चार रुपया।

हरिसिंह नलवा

[लेखक—श्री जयगोपाल जी]

पंजाब-केसरी महाराजा रणजीतसिंह के वीर सेनानी हरिसिंह नलवे का नाम कौन नहीं जानता ? इस वीर योद्धा ने अपने मस्तिष्क में हिन्दू-राष्ट्र की एक सम्पूर्ण योजना तैयार की और उसी के अनुसार हिन्दू-राष्ट्र की शक्ति का प्रसार किया। अटक तक हिन्दू-राज्य की स्थापना की और जमरूद आदि स्थानों पर दृढ़ किले-बन्दियां कीं। अपनी वीरता और पराक्रम से पेशावर और काबुल तक के पठानों में इतनी

दहशत फैला दी कि सीमान्त प्रदेश की माताएँ बच्चों को "हौआ आया" की जगह "नलवा आया" कह कर डराने लगीं। इस वीर राष्ट्र-पुरुष की जीवनी हिन्दी भाषा में उपलब्ध न थी। योग्य लेखक ने बड़ी खोज करके हरीसिंह नलवे का जीवन चरित्र लिखा है और इसकी इतिहासज्ञों और विद्वानों ने बड़ी प्रशंसा की है। पुस्तक के टाइटल पेज पर हरिसिंह नलवे का रंगीन चित्र है। सुन्दर सजिल्द मूल्य २॥)

चाणक्य और चंद्रगुप्त

[लेखक--स्व० श्री हरिनारायण आप्टे]

इस वीर-रस पूर्ण उपन्यास में भारतवर्ष के इतिहास के एक सुनहरे पृष्ठ का चित्र खींचा गया है। जिस समय देश गुलामी के अन्धकार में डूबा पड़ा था, एक नक्षत्र चमका जिसकी चमक और चकाचौंध के सामने विदेशी यवनों को आंखें मूंदकर हथियार डालने पड़े। वह नक्षत्र था चाणक्य--एक दरिद्र ब्राह्मण--जो तक्षशिला से यह प्रतिज्ञा करके निकला कि मातृभूमि को यवनों के पंजे से छुड़ाकर ही दम लूँगा--और अन्त में अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके रहा। चाणक्य सच्चा ब्राह्मण था उसमें ब्रह्म तेज था। उसने चन्द्रगुप्त को अपना साथी चुना और उसे अपनी बुद्धि और कूट-नीति से भिखारी से सम्राट् बना दिया। ब्राह्मण की बुद्धि और क्षत्रिय के क्षात्र-तेज ने मिलकर देश को आज़ाद किया। इस उपन्यास में पराधीन देश को स्वतंत्र कराने में चाणक्य की तीक्ष्ण बुद्धि और कुटिल नीति का वर्णन बड़े रोचक ढङ्ग में किया गया है। चन्द्रगुप्त की अतीव वीरता की झांकी भी इसी उपन्यास में देखें। मूल्य चार रुपया।

राजपाल एण्ड सन्ज़--नई द...